उ० श्री भगवती प्रसाद सिंह जी

❀ श्रीमते रामानन्दाय नमः ❀

श्रीसीता गुणगान

स्तोत्र पञ्चक

16674

लेखक एवं सम्पादकः—

मानसतत्वान्वेषी पं० श्रीरामकुमारदासजी रामायणी
श्रीरामग्रन्थागार, मणिपर्वत श्री अयोध्या जी

श्री विश्वम्भरदयाल जी माथुर एम० ए० उपनाम श्री-भरत शरण जी, भूतपूर्व प्रोफेसर गवर्न्मेण्ट कालेज अजमेर, वर्तमान निवास दिव्यकला कुञ्ज श्री-अयोध्या जी के सम्पूर्ण व्यय से प्रकाशित।

प्रकाशक-प्राप्तिस्थान—

मौनी श्रीरघुनाथदासजी मानस कोविद
श्रीतुलसी साहित्य प्रचारक समिति
शृङ्गवेर पुर, जिला इलाहाबाद।

प्रथम संस्करण १०००] फाल्गुन २०१८ [निछावरि १)

प्रो०-सरयूप्रसाद श्रीवास्तव श्रीहनुमत् प्रेस, श्रीअयोध्याजी

* श्रीमते रामानन्दायनमः *

स्वनामधन्य श्रीभरतशरणजी (प्रो० वि० प्र० माथुर) ने श्रीरामोपनिषत् में पढ़ा कि जो व्यक्ति अपने जीवन भर में छानबे करोड़ श्रीराम नाम जप पूरा न कर सके वह नित्य प्रति स्तोत्र पंचक (नारदोक्त श्रीरामस्तवराज, श्रीशिवोक्त जानकी स्तवराज, श्रीजानकी दण्डक, श्रीराम शतनाम और श्रीजानकी शतनाम) तथा श्रीराम षडक्षरी स्तोत्र का नित्य पाठ मात्र कर लिया करे तो छानबे कोटि श्रीराम राम जापक के समान हो वह सर्व पाप निर्मुक्त होकर श्रीरामसायुज्य प्राप्त कर सकता है।' पढ़ते ही आपकी प्रबल सदिच्छा हुई कि उक्त पंचक एकत्र प्रकाशित हो जाय तो प्रेमियों को सुलभ हो जाय। आपने जयपुर मन्दिर के महान्त स्वामी श्रीपरमानंदजी से कहा—स्वामी जी ने आकर मुझसे पंचक के संग्रह और श्रीजानकी दण्डक के गद्य पद्य टीका के लिये कहा मैंने यथासंभव शीघ्र ही संग्रह करलिया। श्रीरामस्तवराजके सरल होनेसे मूल एवं श्रीजानकी-स्तवराज के 'श्लोकों पर श्रीमती रसराजलता' जी का सवैया-नुवाद दे देने से ही गद्य टीका की आवश्यकता नहीं समझा और दोनों शतनामों की नामावली मात्र रखा है टीका नहीं, पाठ के लिये मूल ही सुगम रहता है हाँ नामों केसाथ संख्यांक लगा दिया है। औपनिषदिक किंवा पौराणिक षडक्षरी स्तोत्र मुझे नहीं प्राप्त हो सका तो किन्हीं श्रीराममिश्र जी कृत श्रीराम-

डषक्षरी स्तोत्र भी मूल रखना उचित समझा। तीन वर्ष पूर्व मेरा एक लेख अवध संदेश में निकला था, वह स्वामी श्रीपरमानन्दजी को बहुत पसन्द आगया था इससे आपने इसी पंचक में उसे भी देने की आज्ञा दी थी। अतः वह भी साथ में प्रकाशित है पाठ के श्लोक सब लगभग दो सौ हैं जो सुगमता से थोड़ी देर में पाठ किये जा सकते हैं। आशा है प्रकाशक की रुचि अनुकूल प्रेमी सज्जन इस पंचक का नित्य पारायण करेंगे।

श्रीभगवद्भगवतानुचरः

रामकुमारदासः

महाशिवरात्रि

वि० २०१८

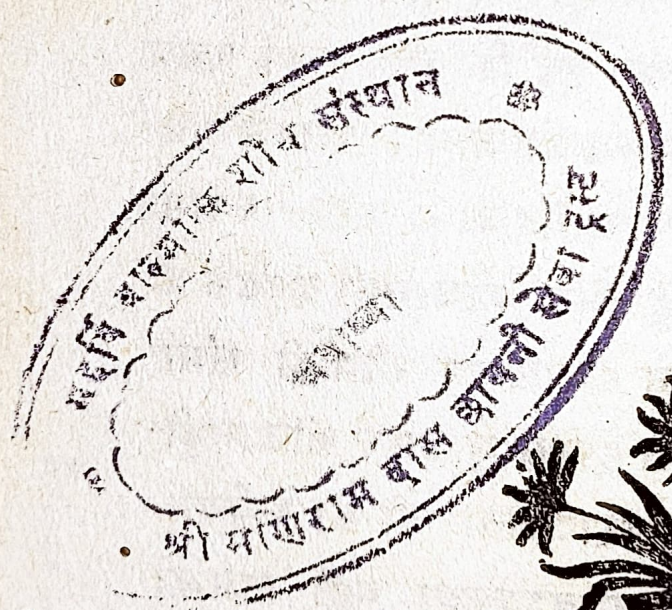

यस० पी० यस० श्रीहनुमत् प्रेस, श्रीअयोध्याजी।

❀ श्रीमते रामानन्दाय नमः ❀

❀ श्रीमज्जनकनन्दिन्यै नमः ❀

❀ श्री सीता गुण-गान ❀

सतीमूर्धन्या धन्या जनकनृपकन्या शुचितरा,
सदाऽभीतासीता रघुवरमनीता प्रियतमा।
सदाभक्ताऽऽसक्ता जननिवत्सुखदा प्रियजने,
महामायाऽमाया बसतु मम हृदये हि नितराम्॥

तडित्समूहदीप्तिहृत्सुवर्णकान्तिलज्जिके,
सुचम्पकावलेपहृत्सुमञ्जुकञ्जमालिके।
अजादिविष्णुरुद्रसेव्यध्येयज्ञेयविग्रहे,
प्रसीद रामबल्लभे प्रदेहि पादपल्लवम्॥

शास्त्रों ने जो 'शक्ति शक्तिमतोरभेदः' शक्ति और शक्तिमान में अभेद कहा है उसे पूज्य गोस्वामीपादने अपने श्रीराम चरित मानस में—

गिरा अर्थ जल बीचि सम, कहियत भिन्न न भिन्न।
बन्दौं सीताराम पद, जिनहिं परम प्रिय खिन्न॥

कहकर सुस्पष्ट कर दिया है कि वह वास्तविक शक्ति और वास्तविक शक्तिमान् श्रीसीता और श्रीराम नाम से नित्य साकेत-त्रिपाद्विभूति में विराजने वाले ही हैं। मानस में ब्रह्म

स्तुति के बाद आकाशवाणी में इसे और भी स्पष्ट कर दिया गया है कि—

पराशक्ति समेत अवतरिहौं ।

यद्यपि औपनिषदिक श्रुति ने ब्रह्म की पराशक्ति को अनेक रूप में बताया है कि –

परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च ।

(श्वेता० ६ । ८ । भव० सं० २ । ४४)

परन्तु सर्व प्रधान पराशक्ति कौन है इसका निर्णय मनु के तपः प्रकरण से भी हो जाता है । अवतार लेने से पूर्व शक्ति शक्तिमान् श्रीसीतारामजी अपने नित्य साकेत में विराजते हैं तथा अवतार लेने पर भी अपना वही सीता और राम नाम धारण करते हुए एकपाद्विभूति में लीला करते हैं । अन्य अवतारों में भले ही नाम और रूप आकर प्रकार वेषभूषा बदला करते हैं परन्तु अपने मुख्यतम अवतार में वही धनुर्धर नित्य किशोर किशोरी श्याम गौर रूप एवं वही सीता और राम ही नाम भी रहने देते हैं । महाराज स्वायंभुव मनु और महारानी शतरूपाजी ने अपने घोर तपः काल में श्रुति भाषित तथ्य की परीक्षा लेना चाहा कि—

उर अभिलाष निरंतर होई । देखिय नयन परम प्रभु सोई ॥
अगुण अखंड अनंत अनादी । जेहि चिंतहिं परमारथ वादी ॥
नेति नेति जेहि वेद निरूपा । निजानन्द निरुपाधि अनूपा ॥
शंभु विरंचि विष्णु भगवाना । उपजहिं जासु अंशते नाना ॥

ऐसेउ प्रभु सेवक बश अहहीं। भक्त हेतु लीला तनु गहहीं॥
जोयह बचन सत्य श्रुति भाषा। तो हमारि पूजहिं अभिलाषा॥

और अठ्ठाइस सहस्र बर्ष घोर तप करने के बाद जब आकाशवाणी द्वारा स्वेच्छित वरदान मांगने का आग्रह हुआ तब मनु दम्पति ने समवेत स्वर में मांगा था कि—

सुनु सेवक सुर तरु सुर धेनू। विधि हरि हर वन्दित पदरेनू॥
जौ अनाथ हित हम पर नेहू। तौ प्रसन्न होइ यह वर देहू॥
जो स्वरूपवश शिव मनमाहीं। जेहिकारण मुनि यतनकराहीं॥
जोभुशुण्डि मनमानस हंसा। सगुणअगुण जेहि निगम प्रशंसा॥
देखहिं हमसो रूप भरि लोचन। करहु कृपा प्रणतारित मोचन॥
दम्पति वचन परम प्रिय लागे। मृदुल विनीत प्रेमरस पागे॥

मनु दम्पति ने किसी भी नाम किंवा रूप का निर्देश नहीं किया था, केवल स्वकथिक परिभाषा विशिष्ट का दर्शन चाहा था। उस समय नित्यकिशोरी श्रीसीताजी के सहित नित्यकिशोर धनुर्धर द्विभुज श्यामसुन्दर श्रीरामजीने प्रगट होकर बतला दिया कि शिवभुशुण्डि मनमानस विहारी, मुनिगणान्वेषित, निगमागम द्वारा सगुण। गुणरूपेण प्रशंसित हम यही युगलरूप दिव्यदम्पति ही हैं। परब्रह्म इसी युगलरूप से त्रिपाद्विभूतिस्थ साकेत में नित्य विराजित रहता है। तत्वतः दोनों गौर श्याम तेज एक ही हैं, इसीसे शास्त्रों ने दोनों का साथ ही अर्चनध्यान विहित किया है—

गौरतेजं विना यस्तु श्यामतेजं समर्चयेत् ।
न स सिद्धिमवाप्नोति न च सायुज्यमाप्नुयात् ॥

(बृद्ध गौतमी तंत्र १ । ११)

वे उपासकों को आनन्द प्रदानार्थ नित्य जब दो रूप से लीला करते हैं तो अलग अलग अनन्तानन्त दिव्य गुणों को भी प्रेमियों के लिये व्यक्त किया करते हैं । वे गुण अनन्त हैं इससे कोई भी किसी भी तरह कभी भी उन गुणों की इयत्ता माप नहीं सकता—

दिव्यानन्तगुणः श्रीमान् दिव्य मंगलविग्रहः ।

(हनुमत्संहिता)

"राम अमित गुण सागर थाह कि पावै कोय ।"
"राम अनन्त अनन्त गुण अमित कथा विस्तार ॥"
'यथा अनन्त राम भगवाना । तथाकथा कीरति गुणनाना ॥'
'रामअनन्त अनन्त गुणानी ।'जन्म कर्म अगणित गुणनाना॥'

(रामचरित मानस)

आदि । श्यामसरोरुह नीलमणि घनश्याम नित्य किशोर श्रीरामभद्र जू के स्थालीपुलाकन्याय से कुछेक गुणों का दिग्दर्शन (मानस संघ रामवन सतना मध्यप्रदेश से प्रकाशित) मेरी लिखी "मानस सिद्धान्त" नामक पुस्तक में किया जा चुका है । यहाँ पराशक्ति नित्य किशोरी कनकोज्वला मृणाल गौरी नित्य उमा रमा शारदादि सेवित चरण सरोरुहा महारानी श्रीसीताजू के अनन्तानन्तदिव्य कल्याण गुणगणों में से

किंचित मात्र का अनुसन्धान उसी स्थाली पुलाकन्याय से ही किया जाता है।

उभयविभूत्यन्तर्गत निखिलपदार्थों के साधारण एवं असाधारण दो भेद हैं। गुणों में असाधारण तो वे हैं जो किसी एक में ही रहते हों अन्य में नहीं और साधारण गुण वे हैं जो अनेक में रहते हों। भगवान् श्रीरामभद्रजू की प्राणप्रियतमा अर्द्धांगभूता, परमाह्लादिनी एवं चिच्छक्ति रूपा, श्रीसम्प्रदाय की परमाचार्या अथ च परमोपास्येष्टदेवता महारानी श्रीसीताजी में दोनों तरह के गुण शास्त्र विख्यात हैं। वेदों ने तो मुक्तकण्ठसे श्रीसीताजो की वन्दना करते हुये याचना कियाहै कि

अर्वाची सुभगे भव सीते ! बन्दामहे त्वा ।
यथा नः सुभगा अससि यथा नः सुफला अससि ॥

(ऋग्वेद, ४ । ५७ । ६, अथर्व० ३ । १२ । ८ तै०आ० ६।६।२)

सुभगे !—सबको कल्याण देने वाली एवं सम्पूर्ण राक्षसों का नाश करने वाली।

सीते !—हे श्रीसीताजी महारानी।

त्वा वन्दामहे !—हमलोग आपकी वन्दना करते है।

नः यथा—हमारा जैसे कल्याण हो वैसा।

अर्वाचीभव ।—करने के लिये अनुकूल होइये।

सुभगा अससि—आपतो अपने जनो को ऐश्वर्य देने वाली हैं और

सुफला अससि—भक्त प्रतिपच्छियों का नाश करके भक्तों को दीप्त करने वाली हैं।

घृतेन सीता मधुना समक्ता, विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः।
सा नः सीते पयसऽभ्यववृत्स्व, ऊर्जस्वती घृतवत् पिन्वमाना॥

(अथर्व० ३। १७। ६)

विश्वैर्देवैः - विश्वेदेवताओं के द्वारा।
मरुद्भिः—और मरुत् देवताओं के द्वारा।
सीता--श्रीसीताजी महारानी।
घृतेन मधुना—घी और शहद से।
सम् अक्ता—भली प्रकार आक्त की गईं अर्थात् पूजी गईं।
सा—वही देवताओं से पूजित।
सीते !—हे श्रीसीताजी आप यज्ञीय उपकरणों।
घृतवत्—अर्थात् गोघृत आदिकों से।
पिन्वमाना—परितुष्ट की गईं हैं। अतः
ऊर्जस्वती—आप परम तेजवाली हैं।
नः—कृपा करके हम लोगों=शरणागतों को।
पयसा—लोक परलोक के समस्त सुखों से।
अभि—अच्छी तरह=सर्व प्रकारेण।
अववृत्स्व।—परिपूर्ण कीजिये।

वेदों में श्रीराम कथा के अनुसार जनकपुर में व्याह के समय देवताओं ने स्तुति करते हुये कहा कि—

इन्द्रः सीतां निगृह्णातु तां पूषानुयच्छतु।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरांसमम्॥

(ऋ० ४। ५। ७=अथर्व ३। १७। ४)

इन्द्रः—परमैश्वर्य सम्पन्न परब्रह्म श्रीरामजी।

सीताम्—श्रीसीताजी को।

निगृह्णातु—ग्रहण करैं और।

पूषा—पुत्रीरूप से पोषण करने वाले श्रीजनकजी।

ताम्—उन श्रीसीताजी का।

अनुयच्छतु- कन्यादान करैं। (किसी की कन्या न होते हुये भी अयोनिजा श्रीसीताजी कन्यादान रूप में दी गईं।)

सा—वे श्रीसीताजी।

नः—हम लोगों को।

उत्तरां उत्तरां—दिनोंदिन तथा।

समम्—प्रति वर्ष।

दुहाम्—कामधेनुवत् पृथ्वी को।

पयस्वती—सर्वकामप्रद करके बहुत ऐश्वर्य (अन्नधन श्री) देने वाली होवें।

पारस्कर गृहसूत्र में भी इसी अर्थ की पुष्टि की गई है।

इन्द्रपत्नीमुपह्वये सीतां सा मे त्वन्न पायिनी भूयात्।

(पार० गृ० सू० २। १७। ६)

भगवान् ने गीता में यज्ञ से परम्परया अन्न होना कहा है-

यज्ञाद्भवति पर्जन्यः पर्जन्यादन्न संभवः॥ (गी० ३।१४)

वैसे सभी वैदिक सात्विक यज्ञों से ही परम्परया कर्म-यज्ञ, मेघ तब अन्न होते हैं परन्तु—

सीताऋध्या बीजेषु च धनेषु च।

इस मंत्र से स्पष्ट होता है कि श्रीसीता-यज्ञ से जितने प्रचुर मात्रा में अन्न और धनकी वृद्धि हो सकती है वैसा अन्न यज्ञों से नहीं, कारण कि अन्य यज्ञों में अन्न धन की कामना पूर्ति के वाक्य यज्ञाचार्य एवं यजमान को अपनी ओर से जोड़ना पड़ता है परन्तु इस मंत्र में वह बात निहित ही है। अतः यज्ञों में भी श्रीसीताजी का असाधारण प्रभुत्व वेदों ने स्वीकार किया है। और औपनिषदिक श्रुतियां भी बार-बार यही कहती हैं कि—

सीतारामौ तन्मयावत्रपूज्यौ० (रा० ता० पू० ३।१)
सीता इति त्रिवर्णात्मा साक्षान्माया मया भवेत्।.....

× × × ×

सीताभगवती ज्ञेया.....सा सर्व वेदमयी, सर्वदेवमयी, सर्व-कीर्तिमयी, सर्वधर्ममयी, सर्वाधारकार्यकारणमयी,..... तद्गुणकर्मविभाग भेदाच्छरीर रूपां॥ (सीतोपनिषत्)

अस्तु! श्रीसीताजी के असाधारण गुण, औरों की कौन कहे श्रीराघवेन्द्र सरकार में भी प्रगट नहीं होते, अर्थात् लीला-रूप में वे गुण श्रीसीताजी में ही रहते हैं, श्रीरामजी के राजेन्द्र रूप में उनका प्रत्यक्षीकरण नहीं होता है। उन दिव्य गुणों का दिक्प्रदर्शन केवल नाम निर्देश मात्र से ही किया जा रहा है। अवकाशाभाव के कारण विशेष व्याख्या तो किसी की न हो सकेगी वरन् अर्थ एवं आवश्यक उद्धरण भी किसी किसी का ही हो सकेगा।

१—निरूपकत्व--प्रभासूर्यवद्भगवत्तत्वनिरूपिका।
यथा-अनन्या राघवेणाहं भास्करेणप्रभा यथा॥
अनन्या च मया सीता चन्द्रश्चन्द्रिकया यथा॥
प्रभा जाइ कहँ भानु बिहाई। कहँचन्द्रिकाचन्द्र तजि जाई॥

२—अनुरूपकत्व—श्रीराघवेन्द्र रामचन्द्रजू के अनुरूप आपही हैं अन्य नहीं—
जेहि विरंचि रचि सीय सँवारी। तेहिश्यामलवर रचेउविचारी
अनुरूपवर दुलहिन परस्पर लखि सकुचि हिय हरषहीं।

३—शेषत्वद्वारा प्राप्तित्व—अनन्त काल से अपराधी जीव जब भगवत्की अदृश्य कृपा के कारण श्रीसद्गुरु की कृपा से शरणागति को स्वीकार करने जाता है परन्तु अपने अपराधों के कारण भय विह्वलित होने से उचित रीति से शरण नहीं हो पाता तो श्रीजी उसकी पूर्णरूपेण सहायता करतीं हैं। उदाहरण में महान् अपराधी जयन्त का संकेत पर्याप्त होगा। सर्वत्र से निराश होकर जयन्त जब सद्गुरुरूप श्रीनारदजी की प्रेरणा से भगवान् श्रीरामजी की शरण में गया तो उस समय उसका आचरण शरणागति के बिपरीत हो गया अर्थात् भय से विह्वल होने के कारण वह अपना पाँव श्रीरामजी की ओर करके मूर्छित (बेहोश) हो गया। उस समय इस तरह बात बिगड़ती देखकर श्रीजी ने स्वयं उठकर अपने कमलकोमल श्रीकरपल्लवोंसे उस अपने अपराधी का सिर पकड़कर श्रीराघवेन्द्र प्रभु के चरणों में रखकर कहा कि प्रभो! यदि स्तनन्धय

बालक स्तन्यपान करते समय अज्ञान से मातृस्तन में दाँत गड़ाकर रक्तस्राव का कारण बन जाता है तो क्या पिता उस अबोध शिशु को प्राण दण्ड देता है ? अतः वैसे ही इस अज्ञानी का चरणचञ्चु प्रहार मेरे अंगों पर समझकर अब एनं त्राहि एनं त्राहि" कहते हुए उसको प्राण रक्षा कराया था। भगवान् वेद व्यासजी ने बड़े सुस्पष्ट शब्दों में उल्लेख किया है—

पुरतः पतितं देवी धरण्यां वायसं तदा।
तच्छिरः पादयोस्तस्य योजयामास जानकी॥
प्राणसंशयमापन्नं दृष्ट्वा सीताऽथवायसम्।
त्राहि त्राहीति भर्तारमुवाच दयया विभुम्॥

(पद्म पु० उत्तर खं० २४२। २०७, २०८।

४—पुरुषकारत्व (कृपादि गुणत्रयमूलक) संतान के प्रति पिता का गुण-वृत्ति हितकरत्व और माता का गुण-वृत्ति प्रियकरत्व रूप से परिस्फुटित होना नैसर्गिक नियम है।

विश्वे अमृतस्य पुत्राः। (ऋ० १०। १३। १)
त्वं पिताऽसि नः। (ऋ० १। ३१। १)
नहित्वदन्य····अस्ति पिता च नः।(अथर्व २०।८३।२)
त्वं हि नः पिता०। (यजु० १७। २७)
पिताहमस्य जगतः माता धाता। (गी० ९। १७)
अहं बीजप्रदः पिता०। (गी० १४। ४)
पिताऽसि लोकस्य चराचरस्य (११। ४३)
पितेव पुत्रस्य० (११। ४४)

इत्यादि वेदों के उद्घोष एवं भारतीय गीता की स्वयं स्वीकृति के अनुसार श्रीरामजी समस्त जीवमात्र के पिता हैं। इसी से-

पितेव त्वत्प्रेयान् जननि परिपूर्णागसिजने,
हितस्रोतो वृत्या भवति च कदाचित्कलुषधीः।
किमेतन्निर्दोषः क इह जगतीत्वमुचितै-
रुपायैर्विस्मार्य स्व जनयसि माता तदसि नः॥

(श्रीगुणरत्नकोश)

हे जननि श्रीसीते! आपके प्राणनाथ श्रीरामजी जब कभी पाप परिपूर्ण जीव पर पिता के समान हितपरक दृष्टि से उसे शुद्ध करने के लिये—

'न त्वमासि कदाचन क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेयोनिषु।

(गीता १६। १९)

कहते हैं, तब आप कहती हैं कि इस जगती-एक पाद्विभूतिस्थ अनन्त ब्रह्माण्डात्मक सृष्टि में सर्वथा निर्दोष कौन है? अतः सबको यदि दण्ड ही देते रहियेगा तो फिर आपके क्षमा, कृपा, करुणा, दया, अनुकम्पा आदि दिव्य गुणों पर पानी फिरते कितनी देरी लगेगी। इस पर श्रीरामभद्रजू कहते हैं कि प्रिये! तुम्हारा कहना तो सर्वथा ठीक है परन्तु मैंने जो शास्त्र अनुशासन की मर्यादा बनाई है कि—

अवश्यमेवभोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।
नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि॥

अतः अपराधी को सर्वथा क्षमा कर देने पर 'कर्मफल अवश्य भोगना पड़ेगा' इस शास्त्रीय मर्यादा पर पानी फिर जायेगा और क्षमा न करने पर दिव्यकमनीय गुणों पर पानी फिरता है। तो-

'उभयतः पाशा रज्जुः' 'इधर कूआं उधर खांई'

की स्थिति में क्या करूं ? तब आप (श्रीजी) समझाती हैं कि जो जीव अपने बल पर निर्भर हों उनके लिये आप अपना शास्त्र-कानून बर्तिये-काम में लाइये, परन्तु जो जीव सर्वथा आप पर निर्भर हों शरणागत-प्रपन्न हों उनके प्रति अपने क्षमा कृपादिगुणों का प्रयोग कीजिये। तबसे आपने नियम बना लिया कि—

बालक सुत सम दास अमानी।
करौं सदा तिनकै रखवारी। जिमि बालकहिं राख महतारी॥

ऐसे ऐसे अनेक उचित उपायों से आप श्रीरामजी को उस दण्ड देने वाली स्वतंत्र ईश्वरीय प्रवृत्ति को भुला कर प्रपन्न चेतनों को अपने दासत्व में स्वीकार करा लेती हैं। इस लिये आप हम शरणागतों की माता हैं।

५—अभिमतत्व-अवतरति जगत्यामीश्वरे हन्त तस्याप्यवतरति हि शक्तिः काप्यसौ रूपिणी श्रीः। (कर्णपूरस्य)

'श्रद्धया देवदेवत्वमश्नुते।'
देवत्वे देवदेहेयं मानुष्यत्वे च मानुषी॥
'रामपदारविन्द रति करति स्वभावहिं खोइ

पांय पखारि बैठि तरु छाहीं । करिहौंवाउ मदित मनमाहीं ॥
सबहि भांति पिय सेवा करिहौं ।

६—उपाय पूरकत्व—

विशेषज्ञतये भर्तुरभिगम्यत्व सिद्धये ।
समस्तमङ्गलावाप्त्वै प्रथमं श्रीरिहोदिता ॥

७—सर्वशक्ति कारणत्व—

'श्रियः श्रीश्चभवेदग्रया कीर्त्याः कीर्तिः क्षितेः क्षमा' ॥
उपजहिं जासु अंश गुण खानी।अगणित उमा रमा ब्रह्मानी॥

८—असामान्य क्षान्तित्व—

रावण बधोपरान्त अशोक वाटिका में जाकर जब श्रीहनूमानजी ने सद्यः अपराधकृत राक्षसियों को अंग भंग करके उन्हें ताड़ना देकर मारने की इच्छा किया-आज्ञा मांगा—

राक्षस्यो दारुणकथा वरमेतत्प्रयच्छ मे ॥ ३२ ॥
मुष्टिभिः पाणिभिः सर्वाश्चरणैश्चैव शोभने ।
इच्छामिविविधैर्घातैर्हन्तुमेताः सुदारुणाः ३३॥
घातैर्जानुप्रहारैश्च दशनानां च पातनैः ।
भक्षणैः कर्णनासानां केशानां लुचनैस्तथा ॥३३॥
भृशं शुष्कमुखीभिश्चदारुणैर्लंघनैर्हतैः ।
निपात्यहन्तुमिच्छामि तव विप्रियकारिणीः।३५॥
एवं प्रकारैर्बहुभिर्विप्रकारैर्यशस्विनि ।
हन्तुमिच्छाम्यहं देवि तवेमाः कृतकिल्विषाः ॥३६॥
(बाल्मीकीय रा० ६ । ११६)

इस तरह जब "चित्रबधमिच्छामि" कह कर आज्ञा मांगा तब श्रीजीने हनूमान् जी को बहुत २ फटकार एवं नीति बतलाकर राक्षसियों की रक्षा कर लिया। यद्यपिकि राक्षसियों ने अपनी रक्षा के लिये उस समय श्रीजी से कहा नहीं था। परन्तु श्रीरामजी के सामने तो काक जयंत के लिये "त्राह्येनं त्राह्येनम्" कहना पड़ा था और विभीषण को—

त्यक्त्वा पुत्रांश्च दारांश्च राघवं शरणं गतः॥

(वा० रा० ६। १७। १६)

कहना पड़ा तब रक्षा हुई। अतः श्रीसीता माता के असामान्य क्षान्तित्व के सामने श्रीराघवेन्द्र सरकार की गोष्ठी लघुतर हो गई। अतएव हेमातः श्रीमैथिली आपकी वही आकस्मिकी क्षान्ति हमारे ऐसे महागसी—महापापी परन्तु शरणागतों को सुखदाई हो—

मातर्मैथिलि रासक्षीस्त्वयि तदैवार्द्राऽपराधास्त्वया,
रक्षयन्त्या पवनात्मजाल्लघुतरा रामस्य गोष्ठीकृता।
काकं तं च विभीषणं शरणमित्युक्ति क्षमौ रक्षतः,
सानः सान्द्रमहागसं सुखयतु क्षान्तिस्तवाकस्मिकी॥

(श्रीगुण रत्नकोश)

६—रूपालौकिकत्व—

जासु बिलोकि अलौकिक शोभा।
सुन्दरता कहँ सुन्दर करई। छबिगृह दीप शिखा जनु बरई॥

श्रीजीके इस रूपालौकिकत्व पर बहुत से सत्कवियोंने बहुत कुछ कहकर अपनी भारती को धन्य किया है। परन्तु

यहां स्थान एवं समय दोनों के संकोच के कारण यत्र तत्र का एकाध पद्य देकर ही संतोष करना पड़ रहा है-

अंकालंकृति मैथिलीस्मितसमुन्मीलत्कपोलस्थली ।
रत्नादर्शविशत्प्रसन्नवदनः देवः प्रसन्नोऽस्तुनः ॥

(श्रीजानकी चरण चामर)

गृहे च यास्मिन्वसथस्म यास्पदे,वृथैव तस्मिन्मुकुरावरक्षणम्।
कपोलयुग्मस्फटिकोपलोपमेतदीयकृत्यं क्रियते हि वो जनैः॥

(भक्त कल्पद्रुमः)

गरब करहु रघुनन्दन जनि मनमाँह ।
आपन रूप विलोकहु सिय के छांह ॥

(गो० श्रीतुलसीदासजी वरवै रामायण)

सिय मुख शोभा साज धोये हाथ विरंचि रचि ।
जल चुइभे द्विजराज कर झारे तारे भये ।

(प्रो० स्व० लालभगवान दीन'जी)

ज्योति के गंज में आधो बराइ, विरञ्चि रची मिथिलेश दुलारी।
आधो रह्यो तेहि को पुनि आधो कै,सूरज चंद्र प्रभान में डारी॥
बाकी रह्यो तेहि को युगभाग कै, एक तरैयन में छवि पारी।
एकहि अंशते तीनिहु लोक की, रूपवती युवतीन सँवारी ॥
भूमि अकाश विचित्र पला दिसिडोर बयारि को दंड बनायो।
तौलन बैठो सिया मुखचन्द औ चंद पितामह आपु सुहायो॥
चंद पला उठि ऊँचो भयो बिधि ने तब एक कियो मन भायो।
दीन्हें चढ़ाय नछत्र सबै "सिरमौर" तबौं न बराबर आयो॥

वे इनपै इनहू उनपै बलिहैं बलिहैं मुद में पगते हैं।
ये उनके रुखराखैं सदा अलि वे इन राखनमें खगते हैं॥

पै मिथिलेश किशोरी छटा अवलोकि लला अति ही ठगतेहैं।
'मोद' जो सांची कहौं छविमें तो ललीसे लला लघुही लगतेहैं॥

(मोदलता)

कोटिन रती को रूप वारहीं तिनूका तोरि,
कोटि पूनो शरद सुधाधर गनै नहीं।
विकस्यो विभाति कोटि अरब अनन्त कंज,
सौरभित सोउ नेकु भावत मनै नहीं॥
उमा रमा शारदादि सुन्दरि समेटि सबै,
'यज्ञराज' तापै ताकी उपमा भनै नहीं।
कोमल बभ्रू को मुख हेरि हेरि कौसिला के,
हौसिला के मारे कुछ बोलत बनै नहीं॥
कोटिन प्रयाग हू ते परम पुनीता कोखि,
जाये भो निवास ऐसे परम पुनीता को।
"यज्ञराज" कैसे धौं बखानि पार पैहैं कवि,
सुखद सुभाव गुण गौरव के गीता को॥
वेश में किशोरी अति भोरी राजहंसिनी सी,
पारायण पतिव्रत पालिवे अधीता को।
कौशला सराहैं मिथिलेशभामिनी को भाग,
राम हू ते सौगुनो विलोकि रूप सीता को॥

(श्रीयज्ञदत्त कवि अयोध्या)

सासु की बुलाई सिय आई अँगनाई बीच,
तादिन मृगाच्छिन को हेरि हिय हरिगो।
उलही दुकूल होइ दुलही के अंग आय,
चंचल चपल चख चौंधनि में भरिगो॥
घूंघुट उघारि मुख देखत दशा बिसारि,
फैलत प्रकाश चन्द तेज मन्द परिगो।
गिरिजा गिरा गुमान सिन्धुजा शची को शान,
काम वाम रूपको गुमान कूच करिगो॥
खोलि मुख दुलही को नंद लै नगीच बैठी,
देखिवे को युवतिन की भीर जुरी बीसा है।
आगे ते दायें ते बायें ते विलोकैं सब,
निज मुख दीसै पै न वाको मुख दीसा है॥
"ग्वाल कवि" आपुस में अचम्भा सब मानि कहैं,
काको यह तिलस्मात काको बखशीशा है।
फिरि फिरि जाँय फिरि पूंछैं आय सासुन से,
शीशा की बहू है कै बहू को बन्यो शीशा है॥

(ग्वाल कवि मथुरा)

मुख कंज में द्वै दृग कंज खिले, कमल कमलोपरि त्यों भ्रम होवै।
हंसली जनु हंस औ मोतिन माल, मनो युग गंग तरंग सँजोवै॥
विकसे बहु कंजन शोभित हैं, रसराज भरी जल आनन्द मोवै।
श्रीमिथिलेश कुमारी नदी महँ, 'रामकुमार' सदाश्रम धोवैं॥

(लेखकस्य)

१०--नव वयत्व--

सदैव एक रस आनन्दवर्द्धनकरी बारह वर्ष की अवस्थावदंगशालिनी ।

द्वादशाब्दा वयोवित्ता नित्यानन्दविधायिनी ।
जानकी मैथिली सीता किशोरी कनकोज्वला ॥ (शि० सं)

११—माधुर्य -

वाचि श्रीमाधुरीणां जनकजनपदस्थायिनीनां कटाक्षे ।
पिय लखि सिय की माधुरी, तृण तूरन के चाइ ।
भोरे धनुष उठाइ कै, तोरे सहज सुभाइ ॥

१२--चारु सौभाग्यरेखाढ्यत्व —

कंजपत्रान्तरोपमे समे रेखाध्वजो युते ।
स्वास्तिकादि सुचिन्हिते सीते तेऽङ्घ्र्यूर्ध्वभागो
रक्ते पाणितले शंखध्वजमत्स्यादि चिन्हिते ॥

(आनन्दरामायणे)

१३--रतिसमंजसत्व —

पति प्रेमवश्य पत्यभिमानगर्विता ।

१४-सखी पंचप्रवेशितत्व—

आप पाँच प्रकार की सखियों से सदैव ही घिरी रहतीं हैं । पाँच प्रकार की सखियाँ ये हैं –

सखी (साधारणी) १, नित्य सखी २, प्राणसखी, ३, प्रियसखी ४, और परमश्रेष्ठ सखी (यूथेश्वरी गण) ५ ।

१५--गन्धोन्मादितराघवत्व —

श्रीसीताजी के दिव्यांग की दिव्य सुगन्ध से राजकुमार श्रीरामजी आनन्दित रहते हैं।

१६--गुर्वर्पित गुरुस्नेहत्व —

गुरुजनों की अत्यन्त प्रेम-स्नेह पात्री।

बधू सप्रेम गोद बैठारी। बार बार हिय हर्षि दुलारी॥

"सुन्दर बधुन सासु लै सोई॥"

"जनक लाइ उर लीन्ह जानकी।"

'सासुन सादर जानकिहिं, मज्जन तुरत कराइ।

दिव्य वसन वर भूषण, अँग अँग रचे बनाइ॥'

परिवार परिजन मोहि राजहिं प्राण प्रिय सिय जानबी।

१७—श्रीराम प्राण प्रियत्व—

बितर बितर वाचं कुत्र सीते गता त्वं,

परिहर परिहास सर्वथा दुःसहं मे।

त्वमसि खलु तनूजा हंत सर्वं सहायाः,

सुतविरहविमुक्तप्राणराजात्मजोऽहम्॥

हे महिनन्दिनि सीय गई कित वेगि सुशीतल वानि सुनावो।

और नहीं सहि जात वियोग विथा, परिहास कथाहिं दुरावो

सर्वसहामहिकीतनुजा तुम ताहि ते चित्त कठोर बनावो।

पुत्र-वियोग-तजे-तनु भूप 'कुमार' हौं तासु प्रिये समुझावो॥

'सीता विनीता दशकन्धरेण,

निर्लज्ज! रे प्राण! कथं न यास्यसि॥

१८-करुणापूर्णत्व —

श्रीसीताजी ने लंका की अशोक वाटिका में कहा था कि-

'राजसंश्रय वश्यानां कुर्वतीनां पराज्ञया ।
दासीनां च विधेयानां कः कुप्येत्प्लवगोत्तम ॥ ३८॥
पापानां वा शुभानां वा बधार्हाणां प्लवंगम ।
कार्यं कारुण्यमार्येण न कश्चिन्नापराध्यति ॥ ४४॥
(वा० रा० यु० ११६)

"हे वानरोत्तम ! हनुमान् भला अपने स्वामी की आज्ञा में तत्पर रहने वाली दासियों पर भी कोई क्रोध करता है।"

हे कपि श्रेष्ठ ! बध करने योग्य महान् पापी पर भी श्रेष्ठ लोगों को करुणा ही करनी चाहिये। भला कहीं संसार में ऐसा भी कोई हो सकता है जिससे कभी कोई अपराध न होता हो।

१९-सन्नेताश्रयकेशवत्व —

केशव नारायण सर्वदा ही श्रीसीताजी की आज्ञा में रहकर आधीन रहते हुये जगत्पालन करते रहते हैं। श्रीरामजी का वाक्य रामरसायन में इस तरह उद्धृत है।

कारे भले सब प्यारी सुनौ, जगजीवन दायक हैं घनकारे।
नैन रुचैं कजरारे हिये, रसिकेश सुकेश सुहात हैं कारे॥
कोकिल कारे किते सुख देत, मनोज शृङ्गार सु भावत कारे।
रावरी आयसु पालैं तिहूँ पुर, सो कमलापतिहूँ अतिकारे॥

२०-मिथिलापुर प्रेमबसतित्व—

सभी मिथिलापुर बासियों के स्नेह प्रेम की बस्ती स्वरूपा।

परिवार परि जन मोहिं राजहिं, प्राण प्रिय सिय जानकी।

२१-जगच्छ्रेणी लसद्यशत्व —

सुयश धवल जग कह सब कोऊ।
गंग अवनि थल तीनि बड़ेरे। यहिकियसाधु समाजघनेरे॥
जितिसुरसरिकीरतिसरितोरी। गवनकीनभिदिअंडकरोरी॥
'कृत्स्नं रामायणं काव्यं सीतायाश्चरितंमहत्॥'

(वा० रा० १।४।७)

यह तो किंचित असाधारण गुणों का दिग्दर्शन है। अब कुछ एकाध साधारण गुणों की झांकी भी करलें। स्मरण रहे कि साधारण गुण भी श्रीजी में आकर दिव्यता प्राप्त कर लेते हैं।

२२-सुमर्यादा — पति अनुकूल सदा रह सीता।
सीय सासु प्रति वेष बनाई। सादर करइ सरिस सेवकाई॥
सावधान सिय सासुन काहीं। सेवइ सबहिं मानमद नाहीं॥

२३-लज्जाशीला-

आरति वश सनमुख भइउँ, विलग न मानब तात।

२४-पद्मगन्धा -

मन्दस्मेरमुखाब्जलुब्धमधुकृत०

(जानकीचरणचामर)

२५-चलापांगा-

चितवति चकित चहूँदिशि सीता। 'पियतनचितइ भौंह करिबांकी'

२६--उज्वल स्मिता--

तिरछे करि नैन दै सैन तिन्है, मुसुकाइ कछू समुझाय चली ॥

(गो० तु० दा० कवितावली)

२७--संगीतप्रसाराभिज्ञा--

चक्रुर्गीतं सुस्वरं सा सीता वीणा समन्विता ।

२८--रम्यवाक्

सविनोदैश्चाटु वाक्यैः रमयामास राघवम् ।

२९--धैर्य शालिनी--

धरि धीरज उर अवनि कुमारी ॥

३०--गाम्भीर्यान्विता —

कहति न सीय सकुच मनमाहीं । इहां बसब रजनी भल नाहीं ॥

३१--नर्म पण्डिता —

रामरसायन में श्रीसीताजी का श्रीरामजी से नर्म परिहास हैं—

लाल सुनौ यक कारे भुजंग, डसै जेहिकां वह होत अचेत है ।
कारो महा कपटी विरहा, जिन कोटिन प्राण लिये विनु होत है ॥
पावस रैन सुकारी अंधारी, घनो विरहीन महादुख देत हैं ।
कारे डसीं मिथिलापुरकी तिय ऊँची उसासें जो आजु लौं लेतेहैं ॥

३२–विदग्धा —

(क) क्रिया वैदग्ध्य—

देखन मिस मृग विहंगतरु, फिरइ बहोरि बहोरि ।
बहुरि वदन विधु अंचल ढांकी । पिय तनचितइभौंहकरिबांकी ॥
खंजन मंजु तिरीछे नयननि । निजपति तिनहिं कहेउसियसैननि ॥

(ख) बचन वैदग्ध्य—

"अदृष्ट पूर्वरूपत्वात् ते सर्वे तव राघव।
रूपं दृष्ट्वाऽपसर्पेयुर्भये सर्वेहि बिभ्यति ॥
(वा० रा० २। २६। ४)

कपटी सब कारे सुनौ रघुचन्द।
मलिन्द बिचारे की काह चली ॥
(रामरसायन)

३३—सुविलासा
अनंग शास्त्रैर्विविधैः रमयामास राघवम्।

३४—पटवान्विता-(चातुर्यशालिनी)

३५—अद्भुत विलासोर्मि।

३६—चमत्कार श्री

३७—मादनह्लादिनी--(सर्व भावोद्गमोल्लासी)

३८—सखी प्रणयितावशा।

३९—महाभावोत्कर्ष तर्पिणी-

प्रेम, स्नेह, मान, प्रणय, राग, अनुराग एवं भावरूपेण परिणता, रति समर्थ (जैसे ईख का बीज या अंकुर बोने से क्रम परिणति के उपरान्त उससे रस, रस से गुड़, गुड़ से खांड़, खांड़ से शर्करा (चीनी), चीनी से सिता (मिश्री) और सिता से सितोपला बनती है। उसी तरह रति से प्रेम, प्रेम से स्नेह, स्नेह से मान, मान से प्रणय, प्रणय से राग, राग से अनुराग, अनुरागसे भाव और भावसे महाभाव उत्पन्न होताहै।

प्रेम क्रमे बाड़ि हय स्नेह मान प्रणय।
राग अनुराग भाव महाभाव हय॥
ये छे बीज इक्षु रसगुड़ खांड़ सार।
शर्करा सिता मिछरि शुद्ध मिछरि आर॥
इहा येछे क्रमे निर्मल क्रमे बाड़े स्वाद।
रति प्रेमादितै छे बाड़ये आस्वाद॥

(चरितामृत मध्यरहस्य)

प्रेम—

सर्वथा ध्वंसरहितं सत्यपि ध्वंस कारणे यद्भावबन्धनं
यूनोः स प्रेमो परिकीर्तितः--

ध्वंस के सर्वथा कारण रहते हुये भी जिसका ध्वंस नहीं होता, युवक युवतियों के इस प्रकार के भावबन्धन को प्रेम कहते हैं।

स्नेह—

आरुह्य परमां काष्ठां प्रेमोच्चिद्दीपदीपनः।
हृदयं द्रवयन्नेष स्नेह इत्यभिधीयते॥

प्रेम जब परमा काष्ठा को प्राप्त करके चिद्दीपदीपन होता है अर्थात् प्रेम विषयोपलब्धि का प्रकाशक होकर हृदय को द्रवीभूत करता है, तब उसका नाम स्नेह होता है।

मान—

स्नेहस्तूत्कृष्टवाप्त्या माधुर्यमानयन्नवम्।
यो धारयत्यदाक्षिण्यं स मान इति कीर्त्यते॥

स्नेह जब उत्कृष्टता प्राप्तिके द्वारा नये नये माधुर्य लाता है परन्तु स्वयं अदाक्षिण्य (कौटिल्य) धारण करता है तब उसे मान कहा जाता है।

प्रणय—

मानो दधानो विस्रम्भं प्रणयः प्रोच्यते बुधैः।

मान यदि विस्रम्भ (विश्वास या भ्रमराहित्य) प्रदान करता है तो उसे प्रणय कहते हैं।

राग—

दुःखमप्यधिकं चित्ते सुखत्वेनैव व्यज्यते।
यतस्तु प्रणयोत्कर्षात् स राग इति कीर्त्यते॥

प्रणयोत्कर्ष के हेतु चित्त में अधिक दुःख भी जब सुख-रूप में अनुभूत होता है तो उस प्रेम को राग शब्द से अभिहित करते हैं।

अनुराग—

सदाऽनुभूतमपि यः कुर्यान्नवनवं प्रियम्।
रागोभवन्नवनवं सोऽनुराग इतीर्यते॥

सदा अनुभूतप्रिय को जो राग नित्य नवत्व प्रदान करके अनुभूति को भी नित्य नवत्व प्रदान करता है उसे ही अनुराग कहते हैं।

भाव—

अनुरागः स्वसंवेद्यदशां प्राप्य प्रकाशितः।
यावदाश्रयवृत्तिश्चेद् भाव इत्यभिधीयते॥

अनुराग यदि 'यावदाश्रय' वृत्ति होकर स्वसंवेद्य दशा को प्राप्त करके प्रकट हो तो उसे ही भाव कहते हैं और भाव की निःसीम दशा ही महाभाव है।

(प्रीति सन्दर्भ रा० क० वि० पृ० २२१)

वैसे तो श्रीराघवेन्द्र सरकार में प्रकट होने वाले क्षमा, दया, कृपा, अनुकम्पा, वात्सल्य, सौशील्य, आर्जव, मार्दव, सौजन्य आदि समस्त दिव्य माधुर्य गुण भी श्रीसीताजी में समय समय पर परिलक्षित होते ही रहते हैं।

यह तो श्रीसीताजी के अनन्तानन्त दिव्य कल्याण गुणों का यह संकेत मात्र है। तथ्य तो यह है कि—

बारिधि सातहु के जल सीकर, कल्प अनैकन लौं गनि लावैं।
भूमि बिखेरि भले रज के कण को, गनि लेत चहै गनि जावैं॥
व्योम सुतारन को बहु भांतिन, कै गिनती यदि तथ्य लखावैं।
तौहूँ 'कुमार' सिया गुण ग्राम, गने शिव विष्णुहु पार न पावैं॥

16674

❀ श्रीमतेरामानन्दायनमः ❀

❀ श्रीमज्जनकनन्दिन्यैनमः ❀

❀ श्रीजानकीदण्डकम् ❀

वन्देरामांकनिलयां धृतकरकमलां चारुहासां सुनासां,
चन्द्राभां कम्बुकण्ठीं स्फुरितकचभरां पुष्पकोदण्ड हस्ताम्।
सर्वालंकारदीप्तां मणिमयमुकुटां दिव्यमालाम्बराढ्यां,
देवीं कर्णांतनयनामाश्रितदुरितहरां रत्नसिंहासनस्थाम् ॥१॥

(धृतकरकमलां पुष्पकोदण्डहस्ताम्) कमलवत् कर में पुष्प धनुषवत् नाल युक्त लीला कमल को लिये हुये (चारुहासाम्) सुन्दर मुसुकुरातीं हुईं (सुनासाम्) तिल पुष्प के समान सुन्दर नासिका वाली (कर्णान्त नयनां) विशाल नेत्रों वाली (स्फुटितकचभरां) चमकते केश एवं (चन्द्राभां) चन्द्रमा के समान आह्लादकारिणी शीतल स्वच्छ कान्ति से युक्त (कम्बु-कंठीं) शंख के समान कण्ठ वाली (सर्वालंकार युक्तां) सखियों के द्वारा सजाये गये समस्त युक्त अलंकारों से शोभित (मणिमयमुकुटां) रत्न जटित क्रीट चंद्रिका धारण किये हुये (दिव्यमाल्याम्बराढ्यां) दिव्य माला एवं वस्त्र धारण किये हुये (रत्न सिंहासनस्थां रामांकनिलयां) मणिमय सिंहासन पर श्रीरामजी की गोदमें विराजमान् (आश्रितभयहरां) शरणा-गतजनों के समस्तभय को मिटाने वाली (देवीं बन्दे) श्री-जानकीदेवी की मैं वन्दना करता हूँ ॥ १ ॥

शंखगल कमल कोदंड-कर-कंज-नैन-
कानन लौं जाइ दीन विपति सुनावहीं।
चन्द्रकान्ति--चारु--हास चटक सुनासामणि-
भूषण बसन माल अंग में सुहावहीं॥
मणिन जटित चित्र चन्द्रिका चमक शीश,
केशकान्ति नागिनीन छटा दिखरावहीं।
राम अंक रत्नपीठ लसैं वन्दौं देवी सीय,
आश्रित 'कुमार' की कुदुरित दुरावहीं॥

दं०-बन्दे श्रीरामकान्तां स्तनभरनमितां दिव्यहेमाम्बराढ्यां,
नानालंकार युक्तामभयवरकरां पद्म सिंहासनस्थाम्।
योगीन्द्रैर्मुनिमानसाब्जनिलयां ब्रह्मादि संसेवितां,
कारुण्यामृतवीक्षणां सुनयनां कल्याण सम्पत्प्रदाम्॥२।

(स्तन भर नमिताम्) चलते समय स्तनों के बोझ से कुछ झुकी सी रहती हैं। (दिव्यहेमाम्बराढ्याम) स्वर्ण सूत्र द्वारा मणि जटित रेशमी बस्त्र पहने. (नानालंकारयुक्ताम्) अनेकों आभूषण अङ्ग प्रत्यंग में सजे हैं। (अभयवरकराम्) आश्रितों को अभय वर देने वाली अभय मुद्रा से (पद्मसिंहासनस्थाम्) अष्ट दल पद्माकार सिंहासन पर सुशोभित हैं। (योगीन्द्रैर्मुनिमानसाब्जनिलयाम् योगीन्द्रों से सेवित एवं मुनियों के हृदय कमल में ध्यानानुरूप विराजित रहने वाली (ब्रह्मादिसंसेविताम्) ब्रह्मा विष्णु आदि से निरंतर सेवित,

(कारुण्यामृतवीक्षणां सुनयनाम्) कृपा रूपी अमृत की धारा बरसाती हुई सुन्दर नेत्रों से आश्रित जनों की ओर देखती हुई, (कल्याणसम्पत्प्रदाम्) जनों को लोक परलोक की परमानन्द-मय सम्पत्ति प्रदान करती रहती हैं, ऐसी (श्रीरामकान्ताम्) श्रीरामभाद्रजू की परमप्रिया श्रीसीताजी की मैं (वन्दे) बन्दना करता हूँ ॥ २ ॥

कनक खचित जरतारी रेशमी सु सारी,
झुकीं कुचभार मणि भूषण लसत हैं।
अष्टदल कंजाकृति दिव्य सिंह आसन पै,
रामबामभाग नित शोभित रहत हैं॥
योगीराज ध्यावैं मुनि मन पद्म बसैं कर-
अभै मुद्रा धरै विष्णु ब्रह्मा सेवारत हैं।
कृपा सुधा भरेदृग सम्पति कल्याण देत,
राम प्रिया वन्दन 'कुमार' जू करत हैं॥

दं०-विद्युद्भासां सुभांगीं विपुलकटितटीं पद्मपत्रायताक्षी-
मुद्यद्रत्न किरीट कुंडलधरां सुस्निग्धमंदस्मिताम्।
विद्यावेद्यमयीं विचिन्त्यविलसद्भूतिप्रदां भासुरां,
ध्याये श्रीरामकांतां हरिहरब्रह्मादिभिस्सेविताम् ॥३॥

(विद्युद्भासांसुभांगीम्) जिनके समस्त शुभ अङ्गप्रत्यंग बिजुली के समान चमकते हैं। (विपुलकटितटीम्) श्रोणी-नितंब विशाल हैं, (पद्म पत्रायताक्षीम्) कमलकी पँखुड़ी के समान विस्तृत नेत्रहैं। (उद्यद्रत्न किरीट कुंडलधराम्) चमकते

हुये मणि जटित किरीट एवं कर्ण भूषण पहने हैं, (सुस्निग्ध-मन्दस्मिताम्) कृपामयीशान्त मन्दमुसुकान वाली हैं विद्या-वेद्यमयीम्) ब्रह्मविद्यासेवेद्य--जान पड़ने वाले श्रीरामजी में तल्लीन रहने वाली हैं, (विचिन्त्य विलसद्भूतिप्रदाम्) ब्रह्मा-शिवादि जिस विलास आनन्द का चिन्तवन करतेहैं वह आनद ऐश्वर्य अपने जनों को देती रहतीं हैं। (हरिहरब्रह्मादिभिस्से-वितम्) विष्णु शिव ब्रह्मा आदि से निरंतर सेवित हैं ऐसी (भासुराम्) परमकान्तिमती (श्रीरामकान्ताम्) श्रीरामभद्र जू की प्राणप्रिया श्रीसीताजीकी मैं (वन्दे) बंदना करता हूँ ॥३॥

बिजुरी सम अंग विशाल नितंब सुनैन बड़े दलकंज महाई।
कान्तितक्रीट सुकुण्डल औ मुसुकानिमें शांतिकृपा दिसनाई॥
वेदन वेद्य सु राममयी सुख दासन देति 'कुमार' सुहाई।
अतिकान्तिमतीविधि शिवहरिसेवित रामप्रिये सुप्रणामसदाई

दं०-श्रीमच्चन्दन चर्चितोन्नतकुचां साचीतमालाम्बरां,
ताटंक द्युति सत्कपोलयुगलां ग्रैवेयकालंकृताम्।
काञ्चीकंकण हंसिका झणझणत्मंजीर पादाम्बुजां,
श्रीरामांकगतां सरोरुह करां देवीं भजे जानकीम्॥४॥

(श्रमित् चन्दनचर्चित उन्नतकुचाम्) जिनके ऊपर उठे वक्षस्थल केशर कपूर कस्तूरी आदि मिश्रित मलय चन्दन से चित्रित-लिप्त हैं जो (साची) बहुत श्रेष्ठ एवं सुन्दर (तमाल अम्बराम्) तमाल के रंग का श्याम वस्त्र धारण किये हैं।

(ताटंकद्युतिसत्कपोलयुगलाम्) जिनके दोनों कपोलों के पास में लटकते हुये ताटंक-कर्णफूलकी चमक प्रति बिंबित होतीहै, जो (ग्रैवेयकालंकृताम्) कण्ठ के भूषण मोती कण्ठा आदि से शोभित हैं। जिनके (कांची कंकण ··· पादांबुजाम्) करधनी, कंकण, पायजेब और नूपुर युक्त बिछुओं की रुन-झुन शब्द से चरण कमल शोभित हैं और जो (सरोरुहकराम्) कमल कल कोमल कान्तित करों में लीला कमल लियेहैं। ऐसी (श्रीरामांकगताम्) श्रीरामजी की गोद में सिंहासन पर बैठी हुई (देवीं जानकीं भजे) देवी श्रीजानकीजी का मैं भजन करता हूँ ॥ ४ ॥

केशर कपूर मृगमद मिले चन्दन सों,
चर्चित उरोज वस्त्र श्यामही सुहावहीं।
कर्णफूल चमक कपोलन में भासमान,
कण्ठा कांची कंकणादि भूषण सुहावहीं॥
कोमलकलित कलकंज करकंजलिये,
पायजेब नूपूर सुमुखर सुहावहीं।
ऐसी देवी जानकी को भजत सदा 'कुमार',
रामगोद बैठि सिंह आसन सुहावहीं॥४॥

दं० नीलाम्भोजदलाभिरामनयनां नीलाम्बरालंकृतां,
गौराङ्गीशरदिन्दुसुन्दरमुखीं बिस्फूर्यबिंबाधराम्।
कारुण्यामृतवर्षिणीं हरिहरब्रह्मादिभिर्वंदितां,
ध्याये भक्तजनेप्सितार्थफलदां रामप्रियां जानकीम्॥५॥

(नीलाम्भोज ··· नयनां) नील कमलदल के समान सुन्दर नेत्र वाली (नीलांबरालंकृताम्) नील वस्त्र धारण किये हुये (गौरांगीं) गौर वर्ण अङ्ग वाली (शरदिन्दुसुन्दरमुखीं)

शरत्--पूर्णिमा के पूर्ण कला विकसित चन्द्रमा के समान सुन्दर मुखवाली (विस्फूर्य बिंबाधराम्) खूब पके हुये कुँदरू के फल के समान लाल अधरोष्ठ वाली (कारुण्यामृत वर्षिणीं) जनों पर कृपा सुधा की वर्षा करने वाली (हरिहर···वन्दितां) विष्णु शिव ब्रह्मा आदि सदैव जिनकी बन्दना करते रहते हैं (भक्त-जनेप्सितार्थ फलदां) भक्त जनों के मनोभिलाषित फल को देने वाली (रामप्रियां जानकीं ध्याये) श्रीरामजी को प्राण प्रिया श्रीजनकराजकिशोरी जू का मैं सदैव ध्यान करता हूँ ॥ ५ ॥

नील कंज दलनैन नीलबस्त्र गौर अंग,
मुखशोभा शारदी निशीथचन्द्र पावहीं ।
पक्वविम्वाफललाल अधर शोभायमान,
दासन पै सदा दया सुधा बरसावहीं ॥
विष्णु शिव ब्रह्मा आदि बन्दन करत नित,
भक्तजनवाञ्छितार्थ फलदैनभावहीं ।
रामप्रिया जनकलड़ैतीपदपद्म परि,
रामके कुमार दासहिये नित्य ध्यावहीं ॥५॥

दं० सीतामुत्फुल्लपकेरुहकलितकरां राघवस्यांकदेशे,
राजंतीं राजराजप्रियनुति विभवां राजबिम्बोपमास्याम् ।
विश्वानंदकरीं विबुधयुवतिभिः सेव्यमामं समंताद्,
वैदेहीं भावयेहं हृदयसरसिजे तत्वविज्ञानरूपाम् ॥६॥

(उत्फुल्ल···करां) सद्यः खिले लाल कमल के समान सुन्दर करपल्लव खिले हुये लीला कमल से शोभायमान हैं। (राघवस्यांकदेशेराजन्तीम्) श्रीरामजी की गोद में बैठी हुई (राजराजप्रियनुतिविभवां) उभयविभूति नायक महाराज श्री-

रामजी को प्रणाम करना ही जिनका प्रिय ऐश्वर्य है अर्थात् जो सदैव श्रीरामजी को प्रणाम करतीं हैं। (राजबिम्बोपमास्याम्) जिनके मुख मण्डल की उपमा में कुछ कुछ पूर्णचन्द्र बिम्ब ही आसकता है। (विश्वानंदकरीं समस्त सृष्टि को आनन्द प्रदान करने वाली (विबुध···समंतान) सेवा करने के लिये देवपत्नियाँ चारों ओर से घेरे खड़ी रहती हैं। (तत्वबितान रूपाम्) योगियों के हृदय कमल में परमतत्व रूप से सदैव भासमान रहने वाली (वैदेहीं सीतां अहं) श्रीबिदेहराजनन्दिनी श्रीसीताजी को मैं (हृदय भावये) अपने हृदय कमल में ध्यान करता हूँ ॥ ६ ॥

बिकसित सुकंजपुष्प करकंज माहिं फेरैं,
राघव के बामअंक राजति रहति हैं।
पूर्ण चन्द्रबिम्बमुख उपमा न आवैं कुछ,
महाराजरामबन्दि बिभव लहति हैं ॥
मातु जिमि पुत्रन को सुखदेति बिश्वसबै,
देव नारि घेरि सदा सेवन चाहति हैं।
तत्व ज्ञान मयी सीय हृदय 'कुमार'ध्यावैं,
श्रीबिदेह नन्दिनीजू दायाकै ढरति हैं ॥६॥

मू० हेमाभामरबिन्दसुन्दरदृशां सौंदर्यसद्मैभवां,
मन्दं मन्दमनोहरस्मितमुखीं मन्दारमालान्विताम्।
कुन्देन्दीवरपाटलैस्सुरभितां वृन्दारकैर्बन्दिता,
बन्दे राघवसुन्दरीं त्रिभुवनानन्दैकदीपांकुराम् ॥ ७ ॥

(हेमाभाम्) तपाये हुये जाम्बूनद जातीय स्वर्ण के समान अङ्ग कांति वाली, (अरविन्दसुन्दरदृशाम्) नील कमल के समान जिनके नेत्रों की पुतलियां हैं, (सौंदर्य सद्वैभवाम्) परम श्रेष्ठ शोभावाली, (मन्दं मदंमनोहरस्मितमुखीं) सुन्दर मुसुकान युक्त मुखवाली, (मन्दारमालान्विताम्) देव-पारिजात का गजरा पहिने हुये, (कुन्देन्दीवरपाटलैस्सुरभिताम्) कुन्द नील कमल और लाल गुलाब इन तीनों पुष्पों की मिश्रित सुगंध जैसी होती है उसी तरह की सुगन्ध जिनके श्रीअङ्ग से निकला करती है, (वृन्दारकैः वन्दिताम्) देवता लोग जिनकी वन्दना किया करते हैं और जो (त्रिभुवनानन्दैकदीपांकुराम्) तीनों भुवन के आनन्द दीप की एकमात्र लौ हैं ऐसी (राघव-सुन्दरीम् वन्दे) श्रीरामभद्र जू की प्राण प्रिया श्रीसीताजी की मैं चतुर्मुख ब्रह्मा वन्दना करता हूँ ॥ ७ ॥

श्वेतश्याम कंजजित नैन कृपा रूप भरे,
हेम कान्तिजित अंग शोभा के निकेत हैं।
मन्दमन्द मुसुकानि युक्त मुखचन्द्रराजैं,
पारिजात हार हिय भूषण समेत हैं॥
कुन्द नीलकंजलै गुलाब सौरभित अंग,
देवगण वन्दत सदैव हित हेत हैं।
तीनोलोक आनन्द प्रकाशक सुदीप लौर,
रामप्रिया पद पै 'कुमार' शीश देत हैं ॥७॥

❀ श्रीमतेरामानन्दाय नमः ❀

❀ श्रीरामस्तवराजः ❀

ॐ अस्य श्रीरामस्तवराजस्तोत्रमंत्रस्य सनत्कुमार ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीरामोदेवता, श्रीसीताबीजम्, हनुमान शक्तिः, श्रीसीताराम प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः। ❀

सूत उवाच –

सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञं व्यासं सत्यवतीसुतम्।
धर्मपुत्रः प्रहृष्टात्मा प्रत्युवाच मुनीश्वरम् ॥१॥

हे साकेतपते चराचरपते मायापते मा पते,
हे क्षेत्रज्ञपते नराखिलपते शरणागतानां पते।
हे विश्वार्धिपते सुरेश्वरपते त्रैपादलीला पते,
हे ब्रह्मेशपते दिगीश्वरपते सीतापते पाहिमाम्॥
शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि हे श्रीसीते नमोस्तुते ॥

❀"ॐश्रीरामायनमः, श्रीरामभद्रायनमः श्रीरामचन्द्रायनमः", इनतीन मंत्रों से तीनवार आचमन करके, हाथ में जल लेकर उपर्युक्त निनियोग मंत्र पढ़कर जल को भूमिपर डालकर तब पाठ करै। [दैनिक पारायण के लिये इतना ही पर्याप्त है। विशेष अनुष्ठान के लिये अंगन्यास, करन्यास, हृदयादिन्यास, ऋष्यादिन्यास एवं मंत्राक्षरन्यास आदि पंचन्यास भी करना चाहिये।

युधिष्ठर उवाच—

⊙ भगवन् योगिनां श्रेष्ठ सर्वशास्त्रविशारद।
किं तत्वं किं परंजाप्यं किं ध्यानं मुक्तिसाधनम् ॥२॥
श्रोतुमिच्छामि तत्सर्वं ब्रूहि मे मुनिपुंगव।

श्रीवेदव्यास उवाच—

धर्मराज महाभाग शृणु वक्ष्यामि तत्वतः ॥ ३ ॥
यत्परं यद्गुणातीतं यज्ज्योतिरमलं शिवम्।
तदेव परमतत्वं कैवल्यपदकारणम् ॥ ४ ॥
श्रीरामेति, परंजाप्यं तारकं ब्रह्मसंज्ञितम्।
ब्रह्महत्यादिपापघ्नमितिवेदविदो विदुः ॥ ५ ॥
श्रीरामरामेति जना ये जपन्ति च सर्वदा।
तेषां मुक्तिश्च मुक्तिश्च भविष्यति न संशयः ॥६॥ *
स्तवराजं पुरा प्रोक्तं नारदेन च धीमता।
तत्सर्वं संप्रवक्ष्यामि हरिध्यानपुरः सरम् ॥ ७ ॥
तापत्रयाग्निशमनं सर्वाघविनिकृन्तनम्।
दारिद्र्यदुःख शमनं सर्वसम्पत्करं शिवम् ॥ ८ ॥

⊙ धर्मराज युधिष्ठर जी ने श्रीव्यासजी से पूँछा कि परं-सर्वोत्तम तत्व क्या है ? परं-सर्व श्रेष्ठ जप-मंत्र कौन सा है ? और मुक्ति प्रद ध्यान-श्रेष्ठ ध्यान कौन सा है।

* श्रीव्यासजी ने बतलाया कि जो सबसे पर एवं गुणातीत हैं जो निर्मल एवं मोक्ष पद के कारण हैं, वह एक मात्र

विज्ञानफलदं दिव्यं मोक्षैकफलसाधनम् ।
नमस्कृत्य प्रवक्ष्यामि रामं कृष्णं § जगन्मयम् ॥ ९ ॥

अथ ध्यानम्—

अयोध्यानगरे रम्ये रत्नमण्डपमध्यगे ।
स्मरेत् कल्पतरोर्मूले रत्नसिंहासनं शुभम् ॥ १० ॥
तन्मध्येऽष्टदलंपद्मं नानारत्नैश्चवेष्टितम् ।
स्मरेन्मध्ये दाशरथिं सहस्रादित्यतेजसम् ॥ ११ ॥
पितुरंकगतं राममिन्द्रनीलमणिप्रभम् ।
कोमलांगं विशालाक्षं विद्युद्वर्णाम्बराबृतम् ॥ १२ ॥
भानुकोटिप्रतीकाशं किरीटेन विराजितम् ।

परं तत्व "श्रीराम" अर्थात् चिदचिद्विशिष्ट ब्रह्म "श्रीराम" हैं अन्य नहीं। तारक ब्रह्म कहा जाने वाला श्रीरामषडक्षर मंत्रराज ही पर जाप्य है। वहषडक्षरमंत्रराज ब्रह्महत्या आदि महापापों का नाशक है। ऐसा वेदवेत्ता लोग जानते हैं। श्रीराम मन्त्र (षडक्षर तारकब्रह्म) के नियमित एवं सविधि जपने का विधान है परन्तु केवल श्रीराम राम राम राम इन दो अक्षरों वाले नाम को जो सदैव प्रत्येक समय प्रत्येक दशा में जपता रहता है वह लोक में समस्त भोगों को और अन्त में मुक्ति को पाजायेगा इसमें कोई सन्देह नहीं। ४—६

§ यहां 'जगन्मयम्' की तरह 'कृष्णं" शब्द 'रामं' का विशेषण है अर्थात् कृष्णवर्ण अर्थात् "नील सरोरुह नीलमणि नील नीरधर श्याम" रंग के दिव्य विग्रह वाले एवं सर्वजगद् व्यापक श्रीरामभद्रजी को नमस्कार करके। इत्यादि।

रत्नग्रैवेयकेयूररत्नकुण्डलमण्डितम् ॥ १३ ॥
रत्नकंकणमंजीरकटिसूत्रैरलंकृतम् ।
श्रीवत्सकौस्तुभोरस्कं मुक्ताहारोपशोभितम् ॥१३॥
दिव्यरत्नसमायुक्तं मुद्रिकाभिरलंकृतम् ।
राघवं द्विभुजं बालं राममीषत्स्मिताननम् ॥ १५ ॥
तुलसीकुन्दमन्दारपुष्पमाल्यैरलंकृतम् ।
कर्पूरागुरुकस्तूरीदिव्यगन्धानुलेपनम् ॥ १६ ॥
योग शास्त्रेष्वभिरतं योगेशं योगदायकम् ।
सदा भरतसौमित्रिशत्रुघ्नैरुपशोभितम् ॥ १७॥
विद्याधर-सुराधीश-सिद्ध-गंधर्व-किन्नरैः ।
योगीन्द्रैर्नारदाद्यैश्च स्तूयमानमहर्निशम् ॥ १८ ॥
विश्वामित्रवशिष्ठादि-मुनिभिः परिसेवितम् ।
सनकादिमुनिश्रेष्ठैर्योगिवृन्दैश्च सेवितम् ॥ १९ ॥
रामं रघुवरं वीरं धनुर्वेदविशारम् ।
मंगलायतनं देवं रामं राजीवलोचनम् ॥ २० ॥
सर्वशास्त्रार्थतत्वज्ञमानन्दकरसुन्दरम् ।
कौशिल्यानन्दनं रामं, धनुर्बाणधरं हरिम् २१ ॥
एवं सञ्चिन्तयन् विष्णुं, यज्ज्योतिरमलं विभुम् ।
प्रहृष्टमानसोभूत्वा, मुनिवर्यः स नारदः ॥ २२ ॥
सर्वलोकहितार्थाय, तुष्टाव रघुनन्दनम् ।
कृताञ्जलि पुरो भूत्वा, चिन्तयेन्नन्दसुतं हरिम् ॥२३॥

यदेकं यत्परं नित्यं, यदनन्तं चिदात्मकम्।
यदेकं व्यापकं लोके, तद्रूपं चिन्तयाम्यहम् ॥ २५ ॥
विज्ञानहेतुं विमलायताक्षं, प्रज्ञानरूपं स्वसुखैकहेतुम्।
श्रीरामचन्द्रं हरिमादिदेवं, परात्परं राममहं भजामि ॥२६
कविं पुराणं पुरुषं पुरस्तात्, सनातनं योगिनमीशितारम्।
अणोरणीयांसमनन्तवीर्यं, प्राणेश्वरं राममसौ ददर्श ॥२७॥

नारद उवाचः—

नारायणं जगन्नाथमभिरामं जगत्पतिम्।
कविं पुराणं वागीशं, रामं दशरथात्मजम् ॥ २८ ॥
राजराजं रघुवरं, कौशल्यानन्दवर्द्धनम्।
भर्गं वरेण्यं विश्वेशं, रघुनाथं जगद्गुरुम् ॥ २९ ॥
सत्यं सत्यप्रियं श्रेष्ठं, जानकीवल्लभं विभुम्।
सौमित्रिपूर्वजं शान्तं, कामदं कमलेक्षणम् ॥ ३० ॥
आदित्यं रविमीशानं, घृणिं सूर्यमनामयम्।
आनन्दरूपिणं सौम्यं, राघवं करुणामयम् ॥ ३१ ॥
यामदग्न्यं तपोमूर्तिं, रामं परशुधारिणम्।
वाक्पतिं वरदं वाच्यं, श्रीपतिं पक्षिवाहनम् ॥ ३२ ॥
श्रीशार्ङ्गधारिणं रामं, चिन्मयानन्दविग्रहम्।
हलधृग्विष्णुमीशानं, बलरामं कृपानिधिम् ॥ ३३ ॥
श्रीवल्लभं कृपानाथं जगन्मोहनमच्युतम्।
मत्स्यकूर्मवराहादि-रूपधारिणमव्ययम् ॥ ३४ ॥

वासुदेवं जगद्योनिमनादिनिधनं हरिम् ।
गोविन्दं गोपतिं विष्णुं, गोपीजनमनोहरम् ॥ ३५ ॥
गोगोपालपरीवारं, गोपकन्यासमावृतम् ।
विद्युत्पुञ्जप्रतीकाशं, रामं कृष्णं जगन्मयम् ॥ ३६ ॥
गोगोपिकासमाकीर्णं, वेणुवादनतत्परम् ।
कामरूपं कलावन्तं, कामिनीकामदं विभुम् ॥ ३७ ॥
मन्मथं मथुरानाथं, माधवं मकरध्वजम् ।
श्रीधरं श्रीकरं श्रीशं, श्रीनिवासं परात्परम् ॥ ३८ ॥
भूतेशं भूपतिं भद्रं, विभूतिं भूतिभूषणम् ।
सर्वदुःखहरं वीरं, दुष्टदानववैरिणम् ॥ ३९ ॥
श्रीनृसिंहं महाबाहुं, महान्तं दीप्ततेजसम् ।
* चिदानन्दमयं नित्यं, प्रणवं ज्योतिरूपिणम् । ४० ॥
आदित्यमण्डलगतं, निश्चितार्थस्वरूपिणम् ।
भक्तप्रियं पद्मनेत्रं, भक्तानामीप्सितप्रदम् ॥ ४१ ॥
कौशल्येयं कलामूर्तिं काकुत्स्थं कमलाप्रियम् ।
सिंहासने सनमासीनं, नित्यव्रतमकल्मषम् ॥ ४२ ॥
विश्वामित्रप्रियं दान्तं, स्वदारनियतव्रतम् ।
यज्ञेशं यज्ञपुरुषं, यज्ञपालनतत्परम् ॥ ४३ ॥

---

* श्लोक ३१ से ३९ तक श्रीरामजी के अन्य अवतारों का वर्णन तत्वतः अभेद मान कर किया गया है ।

सत्यसन्धं जितक्रोधं, शरणागतवत्सलम् ।
सर्वक्लेशापहरणं, विभीषणवरप्रदम् ॥ ४४ ॥
दशग्रीवहरं रौद्रं, केशवं केशिमर्दनम् ।
बालिप्रमथनं वीरं, सुग्रीवेप्सितराज्यदम् ॥ ४५ ॥
नरवानरदेवैश्च, सेवितं हनुमत्प्रियम् ।
शुद्धं सूक्ष्मं परं शान्तं, तारकं ब्रह्मरूपिणम् ॥ ४६ ॥
सर्वभूतात्मभूतस्थं, सर्वाधारं सनातनम् ।
सर्वकारणकर्तारं, निदानं प्रकृतेः परम् ॥ ४७ ॥
निरामयं निराभासं, निरवद्यं निरञ्जनम् ।
नित्यानन्दं निराकारमद्वैतं तमसः परम् ॥ ४८ ॥
परात्परतरं तत्वं, सत्यानन्दं चिदात्मकम् ।
मनसा शिरसा नित्यं, प्रणमामि रघूत्तमम् ॥ ४९ ॥
सूर्यमण्डलमध्यस्थं, रामं सीतासमन्वितम् ।
नमामि पुण्डरीकाक्षममेयं गुरुतत्परम् ॥ ५० ॥
नमोऽस्तु वासुदेवाय, ज्योतिषां पतये नमः ।
नमोऽस्तु रामदेवाय, जगदानन्दरूपिणे ॥ ५१ ॥
नमो वेदांत निष्ठाय, योगिने ब्रह्मवादिने ।
मायामयनिरस्ताय, प्रपन्नजनसेविने ॥ ५२ ॥
वन्दामहे महेशानं, चंदकोदंडखंडनम् ।
जानकीहृदयानन्दचन्दनं रघुनन्दनम् ॥ ५३ ॥
उत्फुल्लामलकोमलोत्पलदलश्यामाय रामाय ते ।

कामाय प्रमदामनोहरगुणग्रामाय रामात्मने ।
योगारूढ़मुनीन्द्रमानसमरोहंसाय संसारवि-
ध्वंसाय स्फुरदोजसे रघुकुलोत्तंसाय पुंसे नमः ॥ ५४ ॥

भवोद्भवं वेदविदांवरिष्ठमादित्यचन्द्रानलसुप्रभावम् ।
सर्वात्मकं सर्वगतस्वरूपं, नमामि रामं तमसः परस्तात् ॥ ५५
निरन्जनं निष्प्रतिमं निरीहं, निराश्रयं निष्कलमप्रपञ्चम् ।
नित्यं ध्रुवं निर्विषयस्वरूपं, निरन्तरं राममहं भजामि ॥५६।
भवाब्धिपोतं भरताग्रजं तं, भक्तप्रियं भानुकुलप्रदीपम् ।
भूतित्रिनाथं भुवनाधिपत्यं, भजामि रामं भवरोगवैद्यम् ।५७
सर्वाधिपत्यं समरेगभीरं सत्यं चिदानन्दमयस्वरूपम् ।
सत्यं शिवं शान्तिमयं शरण्यं, सनातनं राममहं भजामि।५८
कार्यक्रियाकारणमप्रमेयं, कविं पुराणां कमलायताक्षम् ।
कुमारवेद्यं करुणामयं तं, कल्पद्रुमं राममहं भजामि ॥५९॥
त्रैलोक्यनाथं सरसीरुहाक्षं, दयानिधिं द्वन्द्वविनाशहेतुम् ।
महाबलं वेदनिधिं सुरेशं, सनातनं राममहं भजामि ॥६०॥
वेदान्तवेद्यं कविमोशितारमनादिमध्यान्तमचिन्त्यमाद्यम् ।
अगोचरं निर्मलमेकरूपं, नमामि रामं तमसः परस्तात् ॥६१
अशेषवेदात्मकमादिसंज्ञमजं हरिं विष्णुमनन्तमाद्यम् ।
अपारसंवित्सुखमेकरूपं, परात्परं राममहं मजामि ॥ ६२ ॥
तत्वस्वरूपं पुरुषं पुराणं, स्वतेजसा पूरितविश्वमेकम् ।
राजाधिराजं रविमण्डलस्थं, विश्वेश्वरं राममहं भजामि ।६३

लोकाभिरामं रघुबंशनाथं, हरिं चिदानन्दमयं मुकुन्दम् ।
अशेष विद्याधिपतिं कवीन्द्रं,नमामि रामं तमसः परस्तात् ।६४
योगीन्द्रसंघैश्च सुसेव्यामानं, नारायणं निर्मलमादिदेवम् ।
नतोऽस्मि नित्यं जगदेकनाथमादित्यवर्णं तमसःपरस्तात्६५
विभूतिदं विश्वसृजं बिराजं राजेन्द्रमीशं रघुवंशनाथम् ।
अचिन्त्यमव्यक्तमनन्तमूर्तिं,ज्योतिर्मयं राममहं भजामि॥६६
अशेषसंसारबिकारहीनमादित्यगं पूर्णसुखाभिरामम् ।
समस्तसाक्षिं तमसः परस्तात्,नारायणं विष्णुमहं भजाभि६७
मुनीन्द्रगुह्यं परिपूर्णकामं, कलानिधिं कल्मषनाशहेतुम् ।
परात्परं यत्परमं पवित्रं, नमामि रामं महतो महान्तम् ॥६८

ब्रह्मा बिष्णुश्च रुद्रश्च, देवेन्द्रो देवतास्तथा ।
आदित्यादिग्रहाश्चैव, त्वमेव रघुनन्दन ६९ ॥
तपसा ऋषयः सिद्धाः, साध्याश्च मरुतस्तथा ।
विप्रा वेदास्तथा यज्ञाः पुराणाः धर्मसंहिताः ॥७०॥
वर्णाश्रमास्तथा धर्माः, वर्णधर्मास्तथैव च ।
यक्षराक्षसगन्धर्वाः, दिक्पाला दिग्गजादिभिः ॥७१॥
सनकादिमुनिश्रेष्ठास्त्वमेव रघुपुङ्गव ।
वसवोऽष्टौ त्रयः कालाः रुद्रा एकादश स्मृताः ॥७२ ॥
तारका दशदिक् चैव, त्वमेव रघुनन्दन ।
सप्तद्वीपाः समुद्राश्च, नागा नद्यस्तथाद्रुमाः ॥ ७३॥
स्थावरा जङ्गमाश्चैव, त्वमेव रघुनायक ।

देवतिर्यङ्मनुष्याणां, दानवानां तथैव च ॥ ७४॥
माता पिता तथा भ्राता, त्वमेव रघुवल्लभ ।
सर्वेषां त्वं परंब्रह्म, त्वन्मयं सर्वमेवहि ।७५॥
त्वमक्षरं परंज्योतिस्त्वमेव पुरुषोत्तम ।
त्वमेव तारकंब्रह्म, त्वत्तोऽन्यन्नैव किञ्चन ॥७६॥
शातं सर्वगतं सूक्ष्मं परंब्रह्म सनातनम् ।
राजीवलोचनं रामं प्रणमामि जगत्पतिम् ॥ ७७ ॥

व्यास उवाच—

ततः प्रसन्नः श्री रामः प्रोवाच मुनि पुङ्गवम् ।
तुष्टो ऽस्मि मुनिशार्दूल वृणीष्व वरमुत्तमम् ॥७८॥

नारद उवाच—

यदि तुष्टोऽसि सर्वज्ञ, श्री राम करुणानिधे ।
त्वन्मूर्तिदर्शनेनैव कृतार्थोऽहं च सर्वदा ॥ ६६॥
धन्योऽहं कृतकृत्योऽहं पुण्योहं पुरुषोत्तम ।
अद्य मे सफलं जन्म जीवतं सफलं च मे ॥ ८० ॥
अद्य मे सफलं ज्ञानमद्य मे सफलं तपः ।
अद्य मे सफलं जन्म, त्वत्पादाम्भोजदर्शनात् ॥ ८१ ॥
अद्य मे सफलं सर्वं त्वन्नामस्मरणं तथा ।
त्वत्पादाम्भोरुहद्वन्द्वसद्भक्तिं देहि राघव ॥ ८२ ॥
ततः परमसम्प्रीतः स रामः प्राह नारदम् ।
मुनिवर्य्य महाभाग, मुने त्विष्टं ददामि ते ।

यस्त्वया चेप्सितं सर्वं मनसा तद्भविष्यति ॥ ८३ ॥

नारद उवाच—वरं न याचे रघुनाथ युष्मत्-
पादाब्ज भक्तिः सततं ममास्तु ॥
इदं प्रियं नाथ वरं प्रयाचे ।
पुनः पुनस्त्वामिदमेव याचे ॥ ८४ ॥
अद्वैतममलं ज्ञानं त्वन्नामस्मरणं तथा ।

व्यास उवाच—

इत्येवमीडितो रामः प्रादात् तस्मै वरोत्तमम् । ८५ ॥
वीरो रामो महातेजाः सच्चिदानन्दविग्रहः ॥
अन्तर्दधे जगन्नाथः पुरतस्तस्य राघवः ॥ ८६ ॥
इति श्रीरघुनाथस्य, स्तवराजमनुत्तमम् ।
सर्वसौभाग्यसम्पत्तिदायकं मुक्तिदं शुभम् ॥ ८७ ॥
कथितं ब्रह्मपुत्रेण, वेदानां सारमुत्तमम् ।
गुह्याद्गुह्यतमं दिव्यं, तवस्नेहात्प्रकीर्तितम् ॥ ८८ ॥
यः पठेच्छृणुयाद्वापि, त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः ।
ब्रह्महत्यादि पापानि, तत्समानि बहूनि च ॥ ८९ ॥
स्वर्णस्तेयं सुरापानं, गुरुतल्पयुतानि च ।
गोवधाद्युपपापानि, ह्यनृतात् सम्भवानिच ॥ ९० ॥
सर्वैः प्रमुच्यते पापैः, कल्पायुतशतोद्भवैः ।
मानसं वाचिकं पापं, कर्मणा समुपार्जितम् ॥ ९१ ॥
श्रीरामस्मरणेनैव, तत्क्षणान्नश्यति ध्रुवम् ।

इदं सत्यमिदं सत्यं सत्यमेतदिहोच्यते ॥ ९२ ॥
रामः सत्यं परं ब्रह्म, रामात् किञ्चिन्न विद्यते ।
तस्माद्रामस्यरूपोऽयं सत्यं सत्यमिदं जगत् ॥ ९३ ॥

सूत उवाच—

श्री रामचन्द्र रघुपुङ्गव राजवर्य,
राजेन्द्र राम रघुनायक राघवेश ।
राजाधिराज रघुनन्दन रामभद्र,
दासोऽहमद्य भवतः शरणागतोऽस्मि ॥ ९४ ॥

वैदेही सहितं सुरद्रुमतले हेमैर्महा मण्डपे,
मध्ये पुष्पकमासने मणिमये वीरासने संस्थितम् ।
अग्रे वाचयति प्रभञ्जनसुते तत्वं मुनीद्रैः परं ।
व्याख्यातं भरतादिभिः परवृतं रामं भजे श्यामलम् ९५

रामं रत्नकिरीटकुन्डलयुतं केयूरहारान्वितम् ।
सीतालंकृतवामभागममलं सिहासनस्थं विभुम् ॥९६

सकलगुणनिधानं योगिभिः स्तूयमानं, भुजविजितविमानं राक्षसेन्द्रादिमानम् । महितबृषभयानं सीतयाशोभमानं, स्मरहृदयविमानं, ब्रह्म रामाभिधानम् ॥ ९७ ॥

रघुवर ! तवमूर्तिर्मामके मानसाब्जे, नरकगतिहरं तेनामधेयं मुखे मे । अनिशमतुलभक्त्या मस्तकं त्वत्पदाब्जं, भवजलनिधिमग्नं रक्ष मामार्त बन्धो ॥ ९८ ॥

रामरत्नमहं बन्दे, चित्रकूटपतिं हरिम् ।
कौशल्याशुक्ति संभूतं, जानकीकण्ठभूषणम् ॥ ९९ ॥

इति श्रीसनत्कुमारसंहितायां नारदोक्तं श्रीरामस्तवराजस्तोत्रम् ।

श्रीजानकीस्तवराजः

तां ध्यायेस्तवराजेन प्रोक्तरूपां परात्पराम् ।
आह्लादिनीं हरेः कांचिच्छक्तिं सात्वतसेविताम् ॥ १ ॥

श्रीश्रुतिरुवाच—

कीदृशः स्तवराजोऽयं केनप्रोक्तः सुरेश्वरः ।
कथ्यतां कृपयादेव जानकीरूपबोधकः ॥ २ ॥

श्रीसंकर्षण उवाच—

ब्रवीमिस्तवराज ते श्रीशिवेनप्रभाषितम् ।
श्रुतं श्रीवक्त्रतोदिव्यं पावनानां च पावनम् ॥ ३ ॥
चकाराराधनं तस्य मंत्रराजेन भक्तितः ।
कदाचिच्छ्रीशिवो रूपं ज्ञातुमिच्छुर्हरेः परम् ॥ ४ ॥
दिव्यवर्षशतं वेदविधिना विधिवेदिना ।
जजाप परमं जाप्यं रहस्येस्थितचेतसा ॥ ५ ॥
प्रसन्नोऽभूत् तदादेवः श्रीरामः करुणाकरः ।
मंत्राराध्येन रूपेण भजनीयः सतांप्रभुः ॥ ६ ॥

श्रीराम उवाच—

द्रष्टुमिच्छसि यद्रूपं मदीयं भावनास्पदम् ।
आह्लादिनीं परां शक्तिं स्तूयाः सान्वतसम्मताम् ॥७॥
तदाराध्यस्तदारामस्तदधीनस्तयाविना ।
तिष्ठामि न क्षणं शम्भो जीवनं परमं मम ॥ ८ ॥

इत्युक्त्वादेवदेवेशो वशीकरणमात्मनः ।
पश्यतस्तस्यरूपं स्वमन्तर्द्धानं दधौ प्रभुः ॥ ९ ॥
श्रुत्वारूपं तदाशम्भुस्तस्याः श्रीहरिवक्त्रतः ।
अचिन्तयत् समाधाय मनः कारणमात्मनः ॥ १० ॥
अस्फुरत् कृपयातस्य रूपं तस्याः परात्परम् ।
दुर्निरीक्ष्यं दुराराध्यं सात्वतां हृदयंगमम् ॥ ११ ॥
आश्रयं सर्वलोकानां ध्येयं योगिविदां तथा ।
आराध्यं मुनिमुख्यानां सेव्यं संयमिनां सताम् ॥१२॥
दृष्ट्वाऽऽश्चर्यमयं सर्वं रूपं तस्याः सुरेश्वरः ।
तुष्टावजानकीं भक्त्या मूर्तिमन्तीं प्रभाविनीम् ॥१३॥*

श्रीशिव उवाच —

वन्दे विदेहतनयापदपुण्डरीकं,
कैशोरसौरभसमाहृतयोगिचित्तम् ।

---

* श्लोक १ से १३ तक का शारांश—

किसी समय श्रीजानकी स्तवराज के सम्बन्ध में श्रुति के पूंछने पर श्रीसंकर्षणजी ने बताया कि एक बार श्रीरामजी का साक्षात् करने के लिये शंकरजी ने देवताओं के सौ वर्ष तक वेद विधिसे मंत्रराज-षडक्षरश्रीराममंत्र का अनुष्ठान करके श्रीरामजी की आज्ञा प्राप्त किया कि मेरा साक्षात् करने के लिये मेरी परमाह्लादिनी शक्ति श्रीसीताजी का स्तवन करो। तब शंकरजी ध्यान में देखकर श्रीसीताजी की स्तुति करने लगे।

हन्तुं त्रितापमनिशं मुनिहंस सेव्यं
सन्मानसालिपरिपीतपरागपुञ्जम् ॥ १ ॥

जे निज कोमलताई सुगंध से योगिन के चित चोरि लये हैं।
तीनिहु ताप विनाशन को मुनिहंस निरंतर सेइ रहे हैं॥
सन्त सुमानस भृंग पराग पिये जिनके सब तौर छके हैं।
ते मिथिलेश लली पद कंज दोऊ प्रणमो अनुराग भरे हैं॥

पादस्य यावकरसेन तलं सुरक्तं,
सौभाग्यभाजनमिदं हि परं जनानाम्।
युक्तीकृतं सुभजतां तव देवि नित्यं,
दत्ताश्रयं सुमनसां मनसानुरागम् ॥ २ ॥

सुन्दर लाल महावर से जनभाग सुभाजन के भरवा हैं।
देवि दयावश ह्वै नितही निजदासन को अपनो करवा हैं॥
ब्रह्म हरीश सुरेशन के मन रंजन को अपनो वरवा हैं।
रंजित राग सुरागिन के नवनेह मयी सियके तरवा हैं॥

पादांगुलीनखरुचिस्तव देवि ! रम्या
योगीन्द्रवृन्दमनसा विशदा विभाव्या।
त्रैतापक्लान्त्युपशमाय शशांककान्ति-
र्दोषेण किं समुपयाति तुलां युता सा ॥ ३ ॥

पंकज पायन को अंगुलीनख ज्योति लली सु लसै तव नीकी।
कान्तिमयी कमनीय मनोहर योगिन के अवलंबन जीकी॥
ताप तिहूँ जनखेद विनाशनको न तुलै शशि चाँदनि फीकी।
दूषणता युत मन्द मयंक सदा नख ज्योति अदूषित सीकी॥

मञ्जीरधीरनिनदं कलहन्सकाली,
हासाय सा भवति भावयति त्वदीयम् ।
किञ्चापरं रसिकमौलिमनोनियन्तुं,
दृष्टं मया परमकौशलमत्र तस्या ॥४॥

राम प्रिया पद भूषण की रव का वरनों महिमा मति थोरी ।
पंक्ति लजी कलहंसन की सियजू तुव नूपुर की धुनि सोरी ॥
सुन्दर मन्द गँभीर मनोहर कौशलता तेहि मैंहूँ लखोरी ।
प्रीतम श्रीरघुनन्दन के मन मोहन को जनु मंत्र पढ़ोरी ॥

सिद्धीशबुद्धिवररंजनगूढ़गुल्फौ,
पादारविन्दयुगलौ जनतापवर्गौ ।
विन्दन्ति ते त्रिभुवनेश्वरि ! भावसिद्धिं
ध्यायान्ति ये निखिलसौभगभानुभाजौ ॥५॥

ग्रन्थि छिपी जिन पायन में तव नायक के मनमोद प्रदायक ।
दायक मोद महा जनके युगला वनिता रविभा उपजायक ॥
ध्यायक जे नित पायन के जलजायक से सुषमा सरसायक ।
लायक लोक तिहूँ सिय स्वामिनि ते युगभाव परारस दायक ॥

हेमाभिवर्द्धितविभूषणभूषितं ते,
त्रैलोक्यतेज इव मञ्जुलपुञ्जभूतम् ।
भाविस्म सुन्दरि ! पदं सरसीरुहाभं,
भीताऽभयप्रदमनन्तमनोऽभिधेयम् ॥ ६ ॥

हे सिय ! रावर पाद सरोरुह हेमविभूषण भूषित भ्राजे ।
भ्राजे मनो तिहुंलोक को तेज समस्त मनोहरता कर साजे ॥

गाजे सदा पियमानसमें जिन चिन्तन से भवभीति सुभाजे।
लाजे गरूर गँवाय मनो मम आय लगो नितपायन छाजे ॥
चक्राभहारिसुनितम्बयुगं भवत्या,
ध्येयं सुधीभिरनिशं रशनाभिषक्तम्।
ध्यानास्पदं रघुपतेर्मनसो मुनीनां,
भावैकगम्यममरेशनतांघ्रिपद्मे ॥ ७ ॥

चक्र से गोल नितंब लसैं कटि किंकिणि राजत हैं अति नीके।
पीके हिये विलसैं नितही रसरागिन के अवलम्बन जीके ॥
जीके स्वभाव बिलासक हैं मुनिवृन्दन से रसराज थलीके।
लीके रहे अमेरशन के बिनवैं नित ही पद जे शुभ सीके ॥
कौशेयवस्त्रपरिणद्धमलंकृतं ते,
कार्तस्वराश्मनिमणिप्रवरप्रवेकैः ।
रत्नोत्तमै रसनया ग्रहकान्तिमद्भि-
र्भास्वन्ति निर्मिततया स्वधियन्तिमध्यम् ॥ ८॥

सुन्दर स्वच्छ महामनि से ग्रहकान्तिमयी रसना चटकीली।
सो विलसै औ लसैसुषमा सियजू कटिभाग महासुख सीली ॥
मानिक हेम सु हीरन से लहँगा से लसी पिय चित्तकसीली।
प्रेम से जे जन चिन्तत हैं तिनके हियमाँझ सदा सु बसीली ॥
अश्वत्थपत्रनिभमम्ब ! धियोदरं ते,
भाव्यं भवाब्धितरि ! केवल कालनाशे।
भूयो न भावि जननीजठरेनिवास-
स्तेषां मनो धरणिजेऽत्र सुलग्नमासीत् ॥ ९॥

पीपर पात समान सोहावन भावन बुद्धि सियाकर पेट है।
केवल काल नशाय महाभव सिन्धु उतारन को सरिनेक है॥
भूमिसुता तेहि में जिनके मन लागि रहे करिनेम सुटेक है।
फेरि नहीं जननी जठरे तिन आवन है यह लीक अमेट है॥

नाभीह्रदं हरिमनः करिणः कृशांशो
पुष्टिप्रदं प्रचलितत्रिवलीतरंगम्।
राजीसुशैवलनिभं भ्रमिभूतरोम्णां
शान्त्यैतव त्रितपतामतिभावयामः॥ १०॥

नाभिगँभीर सरोवर रावर सोहत है त्रिवलीन तरंग से।
रोम की पंक्ति सेवारसे राजत बीचि लसे लघुलोम कंदव से॥
राम सुमान सुखी न गजेन्द्र भयो अतिपीन नहाय उमंग से।
तीनिहु ताप विनाशन हेतु भये हमहूँ अब आय सुसंग से॥

नीलाभकञ्चुकिमणीन्द्रसमूहनिष्कै-
र्बद्धोजजुग्ममतितुंगमलंकृतं ते।
हारैर्मनोहरतरैस्तरुणि! क्षितीजे!
सौंदर्यबारिनिधिबारितरङ्गसंगम्॥११॥

भूमिसुता नवला सिय जू अति तुंग उरोजउभै तव सोहै।
हार मनोहर मोतिन के मनिबृन्द सजे सरसै सरिको है॥
कञ्चुकि नील सुरंग मयी सुसजी जिनपै पिय चित्त ठगो है।
सुन्दरता के पयोनिधि हैं उपमा न लहैं जिनके सुहियो है॥

बाहू मृणालमदखण्डनपंडितौ ते,
भीताऽभयप्रदवदान्यतमौ जनानाम्।

रुक्मादांकितविटंकितमुद्रिकौ तौ,
हैरण्यकंकणधृतौ वलयौ भजामः ॥ १२॥

बाहु मृणाल छटा मद खण्डनको क्षमहैं भवभीति नशावन।
कंकन हेममयी अँगुठी अँगुलीन विभूषनते छवि छावन॥
भूषन और अनेक खचे मनि से सरसैं सबभाँति सुहावन।
दीननको प्रतिपाल उदार हैं हौं हूँ भजौं सियमातु के पावन॥

कण्ठं कपोततरुणीगलकान्तिमोषं
भूषैरनेकविधभूषितमम्ब तुभ्यम्॥
ध्यायेम मानसविशुद्धकृते कृपालो!
योगीन्द्रभावितपदे शमदे शरण्ये॥ १३॥

मातु शरण्य सिया सुखदायक योगिन पूजित पाद कृपालो।
रावर कण्ठ विभूषित है बहु भूषन ते सुषमा सरियालो॥
काम कबूतर की तरुनी गलकान्ति छटा छवि छीनन वालो।
मानस शुद्धिके हेतु सदा तोंहि ध्यावत हौं न परौं जेहि जालो॥

वक्त्रेन्दुमिन्दुचयखण्डितमण्डितांशुं,
खण्डांशपंडितमनः परिदंडताशम्।
सन्मानसाब्जमुदितद्युतिदं वरेण्यं,
रामाश्चितारकचकोरमहं भजे ते॥१४॥

कोटिन चन्द्रप्रभाछवि हारक है मुखचन्द्र लली सुविभासक।
ताप विनाशक रागिन के अनुमानिन के मनमध्य प्रकाशक॥
सन्त सुमानस कंजन को मुदमोद मयी स्वप्रभा दरसायक।
रामसुनैन चकोर भये तेहि मैं हूँ भजौं सब भाँति विलासक॥

ताम्बूलरागपरिरंजित दन्तपंक्तिः
प्रद्योतिताधरमधः कृत बिम्बरागम्।
ईषत्स्मितद्युतिकटाक्षविकाशिताशं,
वक्त्रं परेशनयनास्पदमाभजेते १५॥

पानके रंग से रंजित दंतन की वरपंक्ति विराजति जामे।
ताकी छटा अधराधर भासित बिम्बस्वराग लजायललामे॥
मन्द हँसी तिरछी अवलोकनि से दिशवृन्द प्रकाशित तामें।
राम सुनैनन को घरहै मुख रावर को भजिहौं तजि का मैं॥

नासाग्रमौक्तिकफलं फलदं परेशे,
ध्यायन्ति ये च निजजाड्य विनाशहेतोः।
त्रैलोक्यनिर्मलपदं सुखदं त्वदीयं,
स्वेच्छाभिकांक्षिण इदं बहुशोरसज्ञा॥ १६॥

रावर नासिक में सिय जू मुकुताफल सुन्दर लोल लसो है।
रामस्वरूप परा रसदायक भायक लोक तिहूं सुखदो है॥
ध्यावत जे सुरसज्ञ इन्है अपनी जड़ता विनशावन को है।
ते धनि धन्य महारस भाविक उज्ज्वलता अभिलाष कियोहै॥

ज्ञानं निरंजनमिदं विवदन्ति ये ते
मुह्यन्ति सूरिनिवहास्तरुणीकटाक्षैः।
नालोकयन्ति नितरां तव देवि! तावद्
दीर्घायुषाक्षियुगमञ्जनरञ्जितं ते॥ १७॥

नारि अपांग विलासन से सुविमोहित हैं जे महा अभिमानी।
ते जो बदैं बहु ज्ञान अकाम चिरायुषता में महा अपमानी॥

अंजन रंजित रावर के युग नैनन को न लखैं ते अजानी ॥
दम्पति रूप परारस स्वादक जेते लखैं नितही जगरानी ॥

भ्रूवल्लरी विलसितं जगदाहुरीशे !
व्यासादयो मुनिवरास्तुत एव नित्यम् ।
नाशाय तस्य तरुणीतिलके त्वदीया,
पाशीकृता हरिमनोमृगबन्धनाय ॥ १८ ॥

हे परमेश्वरि जानकि जू तवभौंह लता से भये जगजानी ।
व्यास शुकादि महामुनिवृन्द बखानत हैं यह बात प्रमानी ॥
फेरि नशैं सब भौंह के फेरत नारि शिरोमणि श्री महरानी ।
राम मनोमृग बन्धन को यह भौंह सुपास पसारि सयानी ॥

भालं विशालमतिसौभगभाजनं ते,
सिन्दूरबिन्दुरुचिरद्युतिदीप्तिमन्तम् ।
पिण्डीकृतः किमुत राग इतीव तस्मिन्,
प्रद्योतिते जननि ! जागतजन्मभाजाम् ॥१९॥

सेंदुर विन्दु से राजतहैं तव भाल विशाल सुभाग को भाजन ।
रागिन के अनुरागहिं को जनु पिंड बनाय लली किये धारन ॥
सो सरसै दरसै सुषमा द्युतिमन्त महारसराज बढ़ावन ।
प्रेम कृतज्ञ महा करुणारस पूरित मातु ! सु शील लखावन ॥

आदर्शबर्तुलकपोलविलोललोलं,
कर्णावतंसयुगलं जनजाड्यनाशम् ।
सूर्यादिकान्तिहरमाश्रयमोजसान्ते,
तीव्रं धिया धरणिजे स्वधियन्ति धीराः । २०॥

आरसि से द्युति गोल कपोलमें लोल दोऊ श्रुतिभूषण सीके।
प्रेमिन के जड़ताहर हैं अरु ज्योतिन के अवलम्बन जी के॥
भानु से आदि महाग्रह मंडल की सब ज्योति हरैं जगती के।
भूमिसुता श्रुतिभूषण को अति ध्यावत धीर विषैरस भीके॥

कालो विभेति जगतामतिभक्तकस्ते,
जैवातृको भवदसीमगुणो यतोऽसौ।
सर्वातिबल्लभतया भजनीयरूपे,
मन्यामहे हरिरिति श्रुतिभूषसारम्॥ २१॥

काल करालमहा जगभक्तक से अतिभीत मयंक पियूषी।
आयलगे सिय कानन में श्रुति भूषन ह्वै सब भाँति अदूषी॥
ताते भयो जगको यह बल्लभ हे भजनीय महारसपूषी।
मातु सिये! तोंहि काल डरै यह जानि निशंक रहे नितभूषी॥

सीमन्तमम्ब! तव सुन्दरतातिसीमं,
मुक्ताविभूषितमलं समभागभाजम्।
निःसीमतापदकृते यतयो यतन्ति,
जानीमहे महितबन्दितसीममूर्ते॥ २२॥

सुन्दरता कर सीम सिया सिर केस समूहन की छविभारी।
भ्राजत है सब तौर बराबरि मोतिन से सुषमा अति न्यारी॥
मातु सियापद पावन को ऋषि योग समाधिन सों उरधारी।
पूजन बन्दनसीम की मूरति जानत हैं हमहूं सिय प्यारी॥

कालाहिभीतिभजतामहिभोगभिन्ना,
पायात्परेश्वरि सतामवती सदा नः।

एणीदृशस्तव विशालतरानुवेणी,
दर्भाग्रभागसदृशी सुदृशां त्रिलोक्याः ॥ २३ ॥

तीनिहुँ लोक सुनारिन में मृगनैनि सिये तव बेणि सुहाई।
नागिनिसी कुश अग्र समान सी है सु बिशालछटा छबिछाई॥
काल भुजंगम से भयभीतन को प्रतिपाल महासुखदाई।
सो हमरो प्रतिपाल करौ परमेश्वरि पीठ लसी सुखदाई॥

माटी सुसूक्ष्मतरतातिगतातिनीला,
सौवर्णसूत्रकलिता कृपयाऽऽवृता ते।
भर्तुः स्वरूपमनुभावयतां जनानां,
प्रीत्यै करोषि परदेवि यदापिधानम् ॥ २४ ॥

साड़ी सिया अति सूक्ष्म नील लसी तव गात्र प्रभादरसाई।
हेमके सूत्रन से कलभूषित हे परदेवि कृपा अधिकाई॥
आनँद हेतु सुरागिन के उर राखत रामस्वरूप छिपाई।
ताहि कृपा रंग से रंगि के मम सारी समेत रहौ उरछाई॥

पारे गिरां गुणनिधे! श्रुतयोबदन्ति,
रूपं त्वदीयमपरं मनसोऽप्यगम्यम्।
साक्षात् कथं सरसिजाक्षि! भवेद्दते ते,
बुद्धौ कृपामनु कृशोदरि मा दृशां तत् ॥२५॥

हे गुणसिन्धु सिया सरसीरुहलोचनि सूक्ष्म पेट परेसे।
मानस से सु अगम्यमहा तवरूप बखानत वेदरुसेसे॥
बानी न जानि सकै जेहिं को तेहिं को केहिभाँति बखानहुँ लेसे।
ऐसो स्वरूप बिनाकरुनातव आइ बसै मम मानस कैसे॥

किं चित्रमत्र जननि ! प्रभयाप्रकाश्यं,
विश्वं वदन्ति मुनयस्तव देवि ! देवाः ।
जाताश्रयस्त्रिभुवनैर्गुणतोऽभिबन्ध-
स्त्राणादिकर्म विभवं परमस्य यस्याः ॥२६॥

देव मुनीश्वर बृन्द कहैं यह विश्व प्रकाशित है तव शान से ।
सो न व्यलीक कही कछु वे सब सत्य कही यह बात प्रमानसे ॥
आपके आश्रित जो जनहैं जगपालन को सु समर्थ सुजानसे ।
ठौर तिहूं जगबन्दित होत हैं मातु तुम्हार परत्व महान से ॥

वेदास्तवाम्ब विवदन्ति निजस्वरूपं,
नित्यानुभूतिभवभावपराः परेशैः ।
निर्णेतुमद्य यतयस्तपसा यतन्ते,
बोधाय पादसरसीरुहयुग्मभृंगाः ॥ २७ ॥

ज्ञान के हेतु बड़े मुनि योगिन्ह पाद सरोरुह की मधुपाई ।
सेइ चहैं सियरूप विबेचन कोटिन योग तपैं मनलाई ॥
ईश्वर जोव महाप्रकृती के प्रबोधक शब्दन कै बलपाई ।
तीनिहु से सु परे तवरूपको गाय थकीं श्रुति पार न पाई ॥

जातं त्वदेव नितरां जगतां निदानं,
मन्यामहे तदिदमम्ब ! कृतं श्रुतीनाम् ।
सर्वं यतः खलु विचेष्टितमाशु शक्तेः,
कार्यं हि कारण गुणानवलम्ब विद्यात् ॥२८॥

मानत हौं बहु विश्व निदान महान जन्यौ जननी तव अङ्ग से ।
यह प्रशंसित विश्व समस्त भयो तेहिते यह बात अभंग से ॥

जाते परे स्वर शक्ति से चेतन विश्व को मानत है श्रुति बृंदसे।
कारण के गुण को बल पाइ के कारज को लखिलेत उमंग से॥
जानीमहे जननि ! ते नयनारविन्द-

स्योन्मीलनेऽजनि जगत् क्षय तन्निमीलात्।
वैषम्यशून्यसमतां समुपागते यत्,
स्यादस्य पालनमसंशयमस्य नूनम् ॥ २६ ॥

जानत हौं जननी तव नैन के खोलन में भये विश्व अपारे।
प्रतिपालन होत सबै ब्रह्माण्डन को तुँ जबै दृग सौंह निहारे॥
फेरि बिलात न देरि लगै जब मूंदति नैन सिया सरकारे।
यों परिपालन सर्ग विनाश अयास बिना सिय नैन निहारे॥

ज्ञातं त्वदीयमपरं चरितं विशालं,
भावं भवे ननु निजे प्रकटीकरोषि।
प्रेम्णैव तैः प्रथमतः परमानुभावं,
भाव्यं पदाब्जमनिशं स्वजनैरतस्ते ॥ ३० ॥

औरहु एक चरित्र विशाल लखी हमने सियजू तव भारी।
आपन रूप प्रकाशविषे प्रगटावतिहौदृढ़भाव सुखारी॥
याही ते सन्त सुरागिन ने अति प्रेम समेत कृपा तव भारी।
भाव प्रबोधक पाँव सरोरुह को प्रथमैं निज मानसधारी॥

येषामदः परमवस्तु च तज्जनानां,
प्रद्योतते जनकजाचरणारविन्दम्।
सर्वं समीक्ष्य इह कर्ममनोवचोभि-
ब्रह्म स्वरूपमतिदुर्लभतानुसेव्यम् ॥३१॥

सन्त सुजान सनेहिन ने सुनि ब्रह्मस्वरूप महासुख सारे।
ताही के हेतु किये श्रमपुंज भले बच मानस काय सँवारे॥
पायो जबै तेहि कोरस हीन फिरे दुखमानि सनेह सँभारे।
ब्रह्म शिवालय औ सुखमालय पौरुषमय तव पाँय सुधारे॥

किं दुर्लभं चरणपंकजसेवया ते,
पूर्णा रमन्तिरमणीयतया त्रिलोक्याम्।
वस्तुप्रकाशविशदं हृदये त्वदीयं,
तेषामहो किमुत साधनकोटियत्नैः॥ ३२॥

दासभये तव पाद सरोरुह सेय मनोरथ पुंजन पूरे।
कौनसी बस्तु अहै तिहुं लोक में जो न लहै सबभाँति हजूरे॥
ताप विनाशक स्वच्छ महा पद कंज दोऊ जिनके उर जूरे।
साधन कोटि उपाय कदम्ब नहीं चहिये तिनको कछु रूरे॥

धन्यास्त एव तव देवि! पदारविन्द-
स्यन्दायमानमकरन्दमहर्निशं ये।
भृंगायमानमनसो नितरां भजन्ते,
भावावबोधनिपुणाः परदेवतायाः॥ ३३॥

हे परमेश्वरि देवि सिया परदेवन देव प्रताप सुपुंगै।
रावर के पद पंकज द्वौ मकन्दर पगे जिनके मन भृगैं॥
राग सुभाव सुहेतु निरन्तर ते जन धन्य महारस चुगैं।
ज्ञान महारस भाव प्रपूजक सिन्धुभरे निरबात तरंगैं॥

पादाब्जरागपरिरंजितचित्तभृंगो,
येषां समीक्ष इह जातमिदं स्वरूपम्।

तेषां न किं प्रवदते परितो बरिष्ठं,
साध्यं भवेदिह परत्र न किञ्चिदन्यत् ॥ ३४ ॥

रावर पाद सरोरुह राग रँगे जिनके चित भृंग सयाने।
राग रँगे जिन रूप विलोकि कि यों बरनै तिनसों सुखमाने॥
श्री मिथिलेशलली पदकंज पराग विषे चितलाय लोभाने।
साधन साध्य सु उत्तम वस्तु दोऊ दिशिमें तिनभूलि न जाने॥

चुम्बन्ति चिद्घनमहो मकरन्दमस्याः,
देवैर्मुनीन्द्रनिचयैरतिदुर्लभं ते।
पादाब्जयोरतिविकाशविलासबोधः-
स्यादेव देवि! तवकान्तनिजस्वरूपे ॥ ३५ ॥

प्रेम सुभक्ति प्रदायनि रावर रंग रँगे पदकंज सुगंधी।
देव मुनीश्वर वृन्दन को सु अगम्य महारस चेतनसंधी॥
जे जन राग समेत निरन्तर चुम्बत हैं तेहि को मन बंधी।
ते तवकान्त स्वरूप विषे शुभज्ञान प्रकाश लहैं सनबंधी॥

यावन्न ते सरसिजद्युतिहारिपादे!
न स्याद्रतिस्तरुनवांकुरखंडिताशे।
तावत् कथं तरुणिमौलिमणे! जनानां,
ज्ञानं दृढं भवति भामिनि! रामरूपे ॥३६॥

मैथिली के जबलौं पद कंज में पीत सरोरुह की द्युति हारी।
कंजकली सी लसी अँगुली जिनमें छबिछाय रही अतिभारी॥
नारिशिरोमणि भामिनि सीय नहीं रति है जिनकी सुखकारी।
राम स्वरूप को ज्ञान महा तबलौं न लहैं करिसाधन भारी॥

साक्षात् तपो व्रतयमैर्नियमैः समीहेत्,
कर्तुं कृपामृतमिह प्रसभं स्वरूपम्।
नाथस्य ते श्रुतिवचो विषयंकथं स्यान्-
मूढ़ो वृथोत्सृजति देवि सुखान्यमूनि ॥३७॥

योग समाधि तपोव्रत नेम से रावर की करुणामृत हीने।
रामस्वरूप चहैं परतच्छ हठी जिन कोटिन साधन कीने॥
ते न लहैं कबहूँ परतच्छ भ्रमैं जगमें अति दीन मलीने।
प्रेम गली सुखपुञ्ज थली तिन्ह नाहक छाँड़त है रस खीने॥

योगाधिरूढ़मुनयो हरि पाद पद्मे,
ध्यायन्ति ये चरणपंकजयुग्ममन्तः।
वाञ्छन्ति विघ्नशतशोऽप्यनिवार्यमाणां,
भक्तिं भवाब्धितरणाय कृपापयोधे ॥ ३८ ॥

जे मुनि योग समाधि चढ़े रघुनन्दन के पद पंकज लाई।
तेऊ तहाँ सिय पाद सरोरुह ध्यावत हैं परमानँद पाई॥
कोटिन विघ्न निवारन को सुसमर्थ परा रस भक्ति लोभाई।
संसृति सागर के तरिबे कहँ जानकि मातु कृपा अधिकाई॥

चार्वङ्गि! ते चरणचारणबन्दिसंगं,
मह्यं विदेहतनये परिदेहि नान्यत्।
याचे वरं वरविदां वरदे भवत्या,
येनामुना तव धवे मम रंजनास्यात्॥ ३९॥

चारु सु अंगिनि हे बरदे बरदानिन की बयदेहि महीजे।
मातु तेरे पदकंज सनेहिन सेवक संग सदा मोहि दीजै॥

औरन याँचत हौं तुमसों बरदानि बिनै हमरी लखि लीजै।
जाते बढ़ै हमरो अनुराग सदा तव प्रीतम में रस भीजै॥

याचेऽहमम्ब ! रघुनन्दनमूर्तिभावं,
साद्धं त्वयाऽतिदृढ़मंजलिना विशेषम्।
त्वं देहि वेत् वरदे मुनिसंघमुख्या,
मन्यन्तिबल्लभतरां स्वपतेर्भवन्तीम्॥ ४॥

मातु सिया बरदानिन को बरदमयिनि ! याँचत हौं करजोरी।
श्री रघुनन्दन मूरति में दृढ़भाव अनन्य परारस बोरी॥
देहु यही 'रसराजलता' बिनवै, जनि स्वामिनि मोहि तजोरी।
मानत हैं मुनि बृन्द सदा तुमको, अपने पति प्राण बसोरी॥

श्री संकर्षण उवाचः—

एवं स्तुत्वा परं रूपं जानक्या जाड्य नाशनम्।
उपारराम शान्तात्मा योगीश्वरः सदाशिवः॥ १॥
निरीक्ष्य तन्मुखाम्भोजं भावयन् रूपमद्भुतम्।
कांक्ष्यंस्तस्याः परां भक्ति पादपंकजयोर्दृढ़ाम्॥ २॥
उवाच तं वरारोहा जानकी भक्तवत्सला।
एवमस्तु महादेव यत्त्वयोक्तं च नान्यथा॥ ३॥
अन्यत्ते कथितं ब्रूहि दास्यामि देवदुर्लभम्।
सत्यान्मयिकृपोन्मुख्यान्न किंचित्तस्य दुर्लभम्॥ ४॥
प्रसन्नवदनां दृष्ट्वा सोऽपि देवशिरोमणिः।
ययाचे वरमात्मीयं रहस्यं भावबोधकः॥ ५॥

प्रादात्तस्मै वदान्या सा यद्यन्मनसि कांक्षितम्।
वरं वरेश्वरी साक्षात् पुनः प्रोवाच सा हि तम्। ६॥
अयं पवित्रमौलिर्मे स्तवराजस्त्वया शिव।
प्रकाशितोऽतिगोप्योऽपि मत्प्रसादात् सुरोत्तम॥ ७॥
यः पठेदिममग्रे मे पूजाकाले प्रयत्नतः।
तस्येहामुत्र किंचिन्न वस्तु स्याद् दृगगोचरम्॥ ८॥
धनं धान्यं यशः पुत्रानैश्वर्यमतिमानुषम्।
प्राप्येहामोदते भूयो मत्पदं तद् व्रजेत् सह॥ ९॥
यद्यल्लोकोत्तरं वस्तु त्रिषुलोकेषु दृश्यते।
सर्वं तदस्य पाठेन प्राप्नुयाद् भुविमानवः॥ १०॥
इदं मे परमैकान्तं रहस्यं सुरसत्तम।
न प्रकाश्यं त्वया शंभो शठाय भावद्वेषिणे॥ ११॥
भक्तिर्यस्यास्तिदेवेशे सर्वैश्वर्ये तथामयि।
गुरौ सर्वात्मभावेन विद्यते भक्तिरुत्तमा॥ १२॥
तस्मैदेयं त्वया शम्भो भावनार्द्रं हृदे गुरौ।
सर्वभूतहितार्थाय शान्ताय सौम्यमूर्तये॥ १३॥
इत्युक्त्वा भावनामूर्तिः सीता जनकनन्दिनी।
कृपापात्राय तस्मै सा पुनः प्रादाद् वरान्तरम्॥ १४॥
सर्वदुःखप्रशमनं जानक्यास्तु प्रसादतः॥ १५॥

❋ सारांश ❋

शिव जी के स्तुति करने पर श्रीसीताजी ने साक्षात् दर्शन देकर शिवजी की इच्छा पूर्ति का बरदान देकर कहा कि तुमने जो चालीस श्लोकों से मेरा परमोत्तम स्तवराज कहा है उसे सदैव सभक्ति स्तवन करने वाला इस लोक के समस्त इच्छित आनन्दों का उपभोग करके मेरे दिव्य साकेत को जावेगा। [इस स्तवराज के चालीस श्लोकोंका ऊपर दिया गया सुललित सवैया छन्दों में अनुवाद किन्हीं श्रीमती "रसराज-लता" जी देवी का है।]

❋ पद ❋

सिया जू के चरन मंगल करन ॥
दीन होइ जो शरण आवत होत तारन तरन।
राम जेहि खल जानि त्यागत ताहु होत सु शरन ॥सिया०॥
अधम काक सुरेश सुत को कोउ न दे पग धरन।
राम के पद मेलि तेहि कहँ होन दीन्ह न मरन ॥सिया०॥
सात सौ निशिचरी लंका बिकट बपु नित धरन।
राखी लीन्हीं पवन सुतसों नीति करि उद्धरन ॥सिया०॥
कहूँ नहिं लखि शरण आयों मातु सिय पग परन।
मिलत "रामकुमार" पद जेहिते मिटति भव जरनि ॥
सिया जू के चरन मंगल करन।

श्रीरामाष्टोत्तरशतनाम स्तोत्रम्।

कैलाशशिखरे रम्ये नानारत्नविभूषिते ।
एकाग्रप्रयतो भूत्वा विष्णुमाराध्यभक्तितः ॥ १ ॥
उपविष्टस्ततो भोक्तुं पार्वतीं शंकरोऽब्रवीत् ।
पार्वत्येहि मया सार्द्धं भोक्तुं भुवनवन्दिते ॥ २ ॥
तामाह पार्वती देवी जप्त्वा नाम सहस्रकम् ।
ततो भोक्ष्याम्यहं देव भुज्यतां भवता प्रभो ॥ ३ ॥
ततस्तां पार्वतीं प्राह प्रहसन् परमेश्वरः ॥ ४ ॥
धन्यासि कृतपुण्यासि विष्णुभक्तासि पार्वति ।
दुर्लभा वैष्णवीभक्तिर्भागधेयं विनेश्वरि ॥ ५ ॥
राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्रनामता तुल्यं रामनाम वरानने ॥ ६ ॥
रकारदीनि नामानि शृण्वतो मम पार्वति ।
मनः प्रसन्नतां याति रामनामाभिशंकया ॥ ७ ॥
रमन्ते योगिनोऽनन्ते सत्यानन्दे चिदात्मनि ।
इति राम पदेनासौ परंब्रह्माभिधीयते ॥ ८ ॥
रामेत्युक्ता महादेवि ! भुंक्ष्वसार्द्धं मयाऽधुना ॥९॥
ततो रामेति नामोक्त्वा सह भुंक्तातु पार्वतिः।
पप्रच्छ शंकरं देवं प्रीतिप्रवणमानसा ॥ १० ॥
सहस्रनामभिस्तुल्यं रामनाम त्वयोदितम् ।
तस्यापराणि नामानि सन्ति चेद्रावणद्विषः ॥११॥

कथ्यतां मम देवेश तत्र मे भक्तिरुत्थिता ।
शृणु नामानि वक्ष्यामि रामचन्द्रस्य पार्वति ॥ १२ ॥
नामानि रामचन्द्रस्य सहस्रं तेषु चाधिकम् ।
तेषु चात्यंत मुख्यं हि नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ॥ १३॥
विष्णोरेकैक नामैव सर्ववेदाधिकं मतम् ।
तादृङ्नामसहस्रैस्तु रामनामसमं मतम् ॥ १४ ॥
यत्फलं सर्ववेदानां मंत्राणां जपतः प्रिये ।
तत्फलं कोटिगुणितं रामनाम्नैवलभ्यते ॥ १५ ॥
नामानि शृणु रामस्य मुख्यानि शुभदर्शने ।
ऋषिभिः परिगीतानि तानि वक्ष्यामि ते प्रिये ॥१६॥

जब से श्री पार्वती जी ने महर्षि श्री वामदेवजी से भगवन्मंत्र की दीक्षा लिया, तबसे नियमित मंत्र जपके बाद श्री विष्णुसहस्रनाम का पारायण करके तब कुछ खाने पीने का नियम कर लिये थीं। एक बार भगवत्पूजन एवं मंत्र जपके बाद विष्णु सहस्रनाम पारायण करनेके लिये बैठीं ही थीं कि उसी समय शंकर जी ने कहा "पार्वति! आवो मेरे साथ भोजन करो। पार्वती जी ने कहा आप भोजन कीजिये, मैं श्रीविष्णुसहस्रनाम का पारायण करके खाऊँगी। शिव जी ने बहुत प्रशंशा करते हुये कहा कि देवि तुम विष्णुभक्ता होने से धन्य हो विष्णुभक्ति बड़ी दुर्लभ वस्तु है।" परन्तु अब श्रीराम कहकर आजावो। क्योंकि 'एक बार का 'राम' कहना "सहस्रनामता" अनेकों सहस्रनाम पारायण के तुल्य है। कोई

रकारादि शब्द कहने लगता है तो रा उच्चारण करते ही मैं अत्यन्त प्रसन्न होता हूँ कि अब यह 'राम' कहेगा। 'राम' पद से परब्रह्म ही कहा जाता है इसी अनन्त सत्यानन्द चिदात्मा में योगी लोग रमण करते हैं।"

(स्मरण रखना चाहिये कि "श्री विष्णु सहस्रनाम" से परब्रह्म के गौण नामों का स्मरण किया गया है। उसके आरम्भ में ही प्रतिज्ञा है कि 'यानिनामानिगौणानि तानिवक्ष्यामिभूतये। १२' अतः उसमें जो 'रामो विरामो०। ५६' पाठ आया है वह परशुराम और बलराम के लिये है, परब्रह्म-दाशरथीरामके लिये नहीं है। अस्तु)

तब पार्वती जी ने विष्णु सहस्रनाम का पारायण नहीं किया और 'श्रीराम" कहकर शिवजी के साथ भोजन किया। सत्संग गोष्ठी बैठनेपर शिवजीसे प्रश्न किया कि आपने अनेकों विष्णुसहस्रनाम के तुल्य रामनामको कहा। उन रावणारि प्रभु के और नामभी तो हैं, अब कृपा करके उन्हें कहिये। श्रीरामजी के नामों में मेरी भक्ति बढ़ गई है। शिव जी ने कहा कि श्रीरामचन्द्रजी के भी सहस्रनाम हैं। उससे भी अधिक अनगिनत नाम हैं उनमें एकसौ आठ नाम मुख्य हैं। यद्यपि विष्णु के एक एक नाम के उच्चारण का महत्व सम्पूर्ण वेद पाठके फलसे अधिक है। परन्तु एक श्रीरामनाम तो विष्णु के अनेकों सहस्र नामों से भी अधिक माहात्म्य सम्पन्न है। सम्पूर्ण वेद पाठ और वेदोक्त नामोंके जपसे भी करोड़ोंगुणा अधिक फल एक बार

श्रीराम नामके उच्चारणसे प्राप्त होता है। हे शुभदर्शने! देवि! ऋषियों द्वारा जपे जाने वाले श्रीरामचन्द्रजी के एकसौ आठ मुख्य नामों को कहता हूं। समाहित चित्त से सुनो।

ॐअस्य श्री रामचन्द्रस्याष्टोत्तरशतनाम्नामीश्वर ऋषिः, अनुष्टुपछन्दःश्रीरामचंद्रोदेवता श्रीरामप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः

१ २ ३ ४
(ॐ) श्रीरामः रामचन्द्रश्च रामभद्रश्च शाश्वतः ।
५ ६ ७ ८
राजीवलोचनः श्रीमान् राजेन्द्रः रघुपुंगवः ॥१॥
९ १० ११ १२
जानकीवल्लभः जैत्रः जितामित्रः जनार्दनः ।
१३ १४ १५
विश्वामित्रप्रियः दान्तः शरणत्राणतत्परः ॥ २ ॥
१६ १७ १८ १९
बालिप्रमथनः बाग्मी सत्यवाक् सत्यविक्रमः ।
२० २१ २२
सत्यव्रतः व्रतधरः सदाहनुमदाश्रितः ॥ ३ ॥
२३ २४ २५
कौशल्येयः खरध्वंसी बिराधबधपण्डितः ।
२६ २७
विभीषणपरित्राता दशग्रीवशिरोहरः ॥ ४ ॥
२८ २९
सप्ततालप्रभेत्ता च हरकोदण्डखण्डनः ।
३० ३१
जामदग्न्यमहादर्पदलनः ताटिकान्तकृत् ॥ ५ ॥
३२ ३३ ३४
वेदान्तपारः वेदात्मा भवरोगस्यभेषजः ।

३५ ३६ ३७
दूषणत्रिशिरोहन्ता त्रिमूर्तिः त्रिगुणात्मकः ॥ ६ ॥
३८ ३९ ४०
त्रिविक्रमः त्रिलोकात्मा पुण्यचारित्र्यकीर्तनः ।
४१ ४२ ४३
त्रिलोकरक्षकः धन्वी दण्डकारण्यवासकृत् ॥७॥
४४ ४५ ४६
अहल्याशापशमनः पितृभक्तः वरप्रदः ।
४७ ४८ ४९ ५०
जितेन्द्रियः जितक्रोधः जितामित्रः जगद्गुरुः ॥८॥
५१ ५२
ऋक्षवानरसंघाती चित्रकूटसमाश्रयः ।
५३ ५४
जयन्तत्राणवरदः सुमित्रापुत्रसेवितः ॥ ९ ॥
५५ ५६
सर्वदेवाधिदेवश्च मृतवानरजीवनः ।
५७ ५८ ५९
मायामारीचहंता च महाभोगः महाभुजः ॥ १० ॥
६० ६१ ६२ ६३
सर्वदेवस्तुतः सौम्यः ब्रह्मण्यः मुनिसंस्तुतः
६४ ६५ ६६
महायोगी महोदारः सुग्रीवेप्सितराज्यदः ॥ ११ ॥
६७ ६८
सर्वपुण्याधिकफलः स्मृतसर्वाघनाशनः ।
६९ ७० ७१
आदिपुरुषः परमपुरुषः महापुरुष एव च ॥ १२ ॥
७२ ७३ ७४
पुण्योदयः दयासारः पुराणपुरुषोत्तमः ।
७५ ७६ ७७ ७८
स्मितवक्त्रः मिताभाषी पूर्वभाषी च राघवः ॥ १३ ॥

७९ ८०
अनन्तगुणगम्भीरः धीरोदात्तगुणोत्तमः ।
८१ ८२
मायामानुषचारित्रः महादेवादिपूजितः ॥१४॥
८३ ८४ ८५ ८६
सेतुकृत् जितवारीशः सर्वतीर्थमयः हरिः ।
८७ ८८ ८९ ९० ९१
श्यामांगः सुन्दरः शूरः पीतवासा धनुर्धर ॥१५
९२ ९३ ९४
सर्वयज्ञाधिपः यज्वा जरामरणवर्ज्जितः ।
९५ ९६
श्रौतधर्मप्रतिष्ठाता सर्वापगुणवर्ज्जितः ॥ १६ ॥
९७ ९८ ९९
परमात्मा परंब्रह्म सच्चिदानन्दविग्रहः ।
१०० १०१ १०२ १०३
परंज्योतिः परंधाम पराकाशः परात्परः ॥१७॥
१०४ १०५ १०६ १०७ १०८
परेशः पारगः पारः सर्वदेवात्मकः शिवः ॥१८॥

(≍)(≍)(≍)

इति श्रीरामचन्द्रस्य नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ।
गुह्याद्गुह्यतरं देवि तव स्नेहात्प्रकीर्तितम् । १९
रामं दूर्वादलश्यामं पद्माक्षं पीतवाससम् ।
स्तुवन्तिनामभिर्दिव्यैर्न ते संसारिणो जनाः ॥ २० ॥
रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे ।
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतयेनमः ॥ २१ ॥
इमं मंत्रं महादेवि जपन्नेव दिवानिशम् ।
सर्व पापविनिर्मुक्तो रामसायुज्यमाप्नुयात् ॥ २२ ॥
इति श्रीरामचन्द्रस्य माहात्म्यं वेद सम्मतम् ।
पद्मपुराणे पातालखण्डे शंकरोदितम् ॥ २३ ॥

—❀—❀—❀—

श्रीजानकीअष्टोत्तर शतनाम स्त्रोत्रम्।

अष्टोत्तरशतं वक्ष्ये नाम्नां परममुत्तमम्।

१ २ ३
सीरध्वजसुता सीता स्वाश्रिताभीष्टदायिनी।
४ ५ ६
सहजानन्दिनी स्तव्या सर्वभूताशयस्थिता ॥ १ ॥
७ ८ ९ १०
ह्लादिनी क्षेमदा क्षान्तिः षडर्धाक्षहृदिस्थिता।
११ १२ १३ १४
श्रीनिधिः श्रीसमाराध्या, श्रियः श्री श्रीमदर्चिता ॥ २ ॥
१५ १६ १७ १८
शरण्या वेदनिः श्वासा वैदेही विबुधेश्वरी
१९ २० २१
लोकोत्तराम्बा लोकादी रघुनन्दनवल्लभा ॥ ३ ॥
२२ २३ २४
रम्यरम्यनिधी रामा योगेश्वरप्रियात्मजा।
२५ २६ २७
यज्ञस्वरूपा यज्ञेशी योगीनाम्परमागतिः ॥ ४ ॥
२८ २९ ३० ३१
मृदुस्वभावा मृदुला मैथिली मधुराकृतिः।
३२ ३३ ३४
मनोरूपा महेशेज्या महासौभाग्यदायिनी ॥ ५ ॥
३५ ३६ ३७
भूमिजा बुधमृग्यांघ्रिकमला बोधवारिधिः।
३८ ३९
फलस्वरूपातपसां फणीन्द्रावर्ण्यवैभवा ॥ ६ ॥
४० ४१ ४२ ४३
नमस्या प्रियदृष्टिश्च धरारत्ना धरासुता।

४४ ४५ ४६ ४७
दिव्यात्मा, दीप्तमहिमा तत्वात्मा जनकात्मजा ॥ ७ ॥
४८ ४९
जगदीशपरप्रेष्ठा ज्ञानिनाम्परमायनम् ।
५० ५१
जगन्मंगलमांगल्या जरामृत्युभयातिगा ॥ ८ ॥
५२ ५३
चन्द्रकलासुखासाध्या चिदानन्दस्वरूपिणी ।
५४ ५५ ५६
चतुरात्मा चतुर्व्यूहा चन्द्रबिम्बोपमानना ॥ ९ ॥
५७ ५८ ५९ ६०
घनश्यामात्मनिलया गोप्त्री गुप्ता गुहेशया ।
६१ ६२
ज्ञेयोदारयशः पंक्तिः, गतैश्वर्यकृतस्मया ॥ १० ॥
६३ ६४
गमनीयपदासक्तिः खलभावनिवारिणी ।
६५ ६६ ६७
कृपापीयूषजलधिः कृतज्ञा कृतिसाधना ॥११॥
६८ ६९ ७० ७१
कल्याणप्रकृतिः काम्या कल्याणी कामवर्षिणी ।
७२ ७३ ७४
कारुण्यार्द्रविशालाक्षी कम्बुकण्ठी कलानिधिः ॥१२॥
७५ ७६ ७७
कोलप्रिया कलाधारा कल्मषौघनिवारणी ।
७८ ७९ ८० ८१
ॐ शब्दवाच्या ह्योजोऽब्धिः उदितश्रीः उदारधी ॥१३॥
८२ ८३ ८४
उदारकीर्तिः उदिता ह्युदारातुल्यदर्शना ।
८५ ८६ ८७ ८८
इष्टप्रदेभगमना आदिजाऽऽ ह्लादिनीपरा ॥१४॥

८९ ९० ९१
आश्रितवत्सला ऽऽराध्या ह्यनिर्देश्यस्वरूपिणी ।
९२ ९३
अद्वितीयसुखाम्भोधिः, अव्याजकरुणाकरा ॥१५॥
९४ ९५ ९६
अनवद्या ऽप्रमत्तात्मा अनन्तैश्वर्यमण्डिता ।
९७ ९८ ९९ १०० १०१
अमाना ऽयोनिजा ऽकोपा अविचिन्त्या ऽनघस्मृतिः॥१६॥
१०२ १०३ १०४ १०५
अनीहा ऽनियमा ऽनादिमध्यान्ता ऽद्भुतदर्शना ।
१०६ १०७ १०८
अजेया ऽकल्मषा ऽकारवाच्येत्यवनिपोत्तम ॥१७॥

अष्टोत्तरशतं नाम प्रोच्यते ऽस्या महर्षिभिः ।
पठतां प्रत्यहं भक्त्या कापि सिद्धिर्न दुर्लभा ॥

इति रामसनेहीदासाभिधे बुधवरे विरचिते श्रीजानकी-चरितामृतेऽष्टाशीतितमेऽध्याये संग्रहीतं श्रीजानक्या अष्टोत्तर शतनाम स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

❀ श्रीमज्जनकनन्दिन्यै नमः ❀.

श्री श्रीजानकीजी महारानी की जय हो !

श्रीजनकराजकन्ये मातः तुम्हारी जय हो।
त्रैलोकपूज्य धन्ये मातः तुम्हारी जय हो॥
श्रीजनकलली प्यारी निमिवंश की दुलारी।
सब जगसे छटा न्यारी मातः तुम्हारी जय ही ॥श्री०॥
जा बिधि जगत को भल हो जीवन जनम सुफल हो।
कीजै सोई कृपाकरि मातः तुम्हारी जय हो ॥श्रीजन ॥
नहिं और कोऊ मेरे मैं जाऊँ किसके नेरे।
निज चरण में बुलालो मातः तुम्हारी जय हो ॥श्री०॥
कीन्हीं कृपा अहैतुकि दीन्हीं मनुज की देही।
अब चरण शरण दीजै मातः तुम्हारी जय हो ॥श्री०॥
जीवन बचा जो जग में बीते तुम्हारे मग में।
तुव चरण प्रेम रँग में मातः तुम्हारी जय हो ॥श्री०॥
मन पाप से भरा है भवसिन्धु में परा है।
कृपया निकाल दीजै मातः तुम्हारी जय हो ॥श्रीज०॥
हा हम हैं मोह अन्धे करते जगत के धन्धे।
दीजै सुज्ञान दृग अब मातः तुम्हारी जय हो ॥श्री०॥
राघव की कंज दृष्टी में है सुधा की सृष्टी।
करवा दो कृपा वृष्टी मातः तुम्हारी जय हो ॥श्रीज०॥
नीचे हैं दृग हमारे उपकार लखि तुम्हारे।
तौ हू सस्वार्थ बिनवौं मातः तुम्हारी जय हो ॥ श्री० ॥

की मैं न सुत तुम्हारा की तुम न मातु मेरी।
फिर क्यों न गोद लेतीं मातः तुम्हारी जय हो ॥श्री०॥
जस पाप हैं हमारे गनि यम फणीन्द्र हारे।
हौं तुव चरण सहारे मातः तुम्हारी जय हो ॥श्रीजन०॥
यह विनय शुभ तुम्हारी सब जग को मोदकारी।
भक्ती को हौं भिखारी मातः तुम्हारी जय हो ॥ श्री०॥
होते कुपूत कितने माता न हो कुमाता।
लो गोद में 'कुमारहिं' मातः तुम्हारी जय हो ॥श्री०॥
श्रीजनकराज कन्ये मात. तुम्हारी जय हो।
त्रयलोक पूज्य धन्ये मातः तुम्हारी जय हो॥

* पद *

मैया मोहिं एक भरोसो तेरो ॥ टेक ॥
कबहुँ सुकृत कछु कीन्ह न सपनेहुँ पापन ते मन घेरो।
धन जन बल विद्या विवेक नहिं मातु जाउँ केहि खेरो ॥मैया०॥
मात पिता पति तिय सुत भ्राता स्वारथ मीत घनेरो।
तौं बिनु दूसर रक्षक कोऊ जानि परै नहिं मेरो ॥ मैया ॥
तुम्हरी कृपा दरश सपनेहुँ लखि डर न हृदय केहु केरो।
आश त्रास तेहि डर न रहत कछु, जो तुव पद रज चेरो ॥मै०॥
निज 'कुमार' शिशु जानि मोहिंतन कृपादृष्टि करि हेरो।
मातु सीय श्रीराम संग लै करहु हृदय मम डेरो ॥ मैया० ॥
मैया मोहिं एक भरोसो तेरो॥

(≍)(≍)(≍)

लेखक की प्रकाशित कृतियाँ

१—श्रीराम मंत्रार्थ (सार्थ रामतारक प्रयोग विधि) ॥)

२—मानस पारायण पूजन पद्धति (द्वितीयावृत्ति) ।≡)

३—सखी गीता ।)

४—धर्मरथ ॥।)

५—मानस सिद्धान्त प्रथम खंड २॥)

६—वेदों में श्रीराम कथा ४)

७—मंगल पचीसी =)॥

८—सम्बाद बत्तीसी (रम्भाशुक संबाद का सवैयानुवाद) =)॥

उपर्युक्त आठों पुस्तकें मानस संघ, पो० रामवन, जिला सतना (म० प्र०) से प्राप्त होती हैं।

९—दो विभूतियाँ ॥) अप्राप्य

१०-श्रीजानकी चरणचामर की सरल टीका और

११-श्रीजानकी च० चा० की सवैयों में रजप्रच्छालिनी टीका २)

१२-प्रेममयी मुद्रिका ।)

१३-श्रीसीतागुणगान + स्तोत्र पंचक १)

ये पुस्तकें श्री तुलसी साहित्य प्रचारक समिति शृङ्गवेरपुर जि० इलाहाबाद से प्राप्त होती हैं।

शीघ्र प्रकाशित होने वाली पुस्तकें:—

१—मानस शंका समाधान रत्नावली

२—मानस रत्न मंजूषा

३—वेदों में श्रीकृष्ण कथा

४—सत्योपाख्यान का हिन्दी अनुवाद